प्रकाशक—
शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी लि०
आगरा।

द्वितीय संस्करण
१९४५

मूल्य १।)

मुद्रक—
माधो प्रिन्टिङ्ग वर्क्स,
इलाहाबाद।

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक 'शिकार' में लेखक की मूल पुस्तक 'शिकार' के स्मृति, कुफ्र टूटा, भिड़न्त, मौत के मुंह में, खूनी घटवारा, खलीफ़ा के हाथ और पैने छुरे, इन सात लेखों का संग्रह है। साहसिक घटना सम्बन्धी साहित्य किसी देश के साहित्य का मुख्य अङ्ग होता है, और विद्यार्थियों के लिए तो वह परमावश्यक है, क्योंकि मन पर उत्साह और स्फूर्ति का चित्र अङ्कित करके वह चरित्र-गठन में सहायक होता है।

हिन्दी में प्रकृति-वर्णन और साहसिक घटना सम्बन्धी साहित्य का अभाव-सा ही है, और इस अभाव की पूर्ति का श्रीगणेश इस पुस्तक से अवश्य होता है; पर लेखक का यह उद्योग, विषय की दृष्टि से, अभी सागर की एक बूंद के समान है।

इस पुस्तक से विद्यार्थियों और अध्यापकों में प्रकृति की ओर कुछ भी रुचि हुई, अपने पड़ोस के पक्षियों के सम्बन्ध में उनको तनक भी जानकारी बढ़ी—और उस दिशा में—जङ्गली जानवरों और पक्षियों के रहन-सहन के अध्ययन की ओर कुछ प्रयास हुआ तो लेखक अपना परिश्रम सफल समझेगा।

रही यह बात कि पुस्तक कैसी है ! उसका साहित्यिक महत्व क्या है ? उसके लिए यही लिखना पर्याप्त है कि पुस्तक इन बातों का स्वयम् उत्तर देगी।

साहित्य-सदन,
किरथरा,
पो० मक्खनपुर E. I. R.
जि० मैनपुरी।

श्रीराम शर्मा

विषय-सूची

—:o:—

स्मृति

सायंकालको जब मैं अकेला जङ्गलसे लौटता हूँ, तब डूबते हुए सूर्यकी किरणें पूर्वकी ओर संकेत करती हुई मानो कहती हैं—"शैशव-कालमें हमारी दृष्टि अपने वर्तमान स्थानकी ओर थी। इधर आनेको हम उतावली हो रही थीं, पर मध्याह्न के मदके उपरान्त अनुभव हुआ—और अब तो हम बिलख रही हैं—कि बाल्यकाल के उस माधुर्यकी पुनः प्राप्ति असम्भव है! ऐ रायफ़लधारी! शीघ्र ही आयु ढलनेपर तू भी हमारी भाँति बाल्यकालके लिए विह्वल होकर आँसू बहायेगा। अच्छा हो, तू अभी से चेते।"

मैंने इस चेतावनीको बहुत-कुछ सार्थक पाया है। उससे वेदान्तका पाठ पढ़ा है। प्रातःकालके समय मनुष्यकी छाया—दैवी सिगनल, पश्चिम—अन्त—की ओर होती है। मानो वह कहती है कि अवसानपर दृष्टि डाल, पर बाल्यकालमें विरले ही उधर देखते हैं। कोई देखे भी कैसे और क्यों देखे? जीवन-

यात्राके प्रारम्भमें चारों ओर हृदयकी अन्तरतम लहर और मनकी उच्चतम उड़ान तक सब्ज़ बाग़ ही दिखाई पड़ते हैं। बरसातमें उगे पौदेको आनेवाली शीत और ग्रीष्मका कुछ पता नहीं होता। उद्गमके समीपके सरिता-जलको क्या मालूम कि आगे चलकर संसारकी ग़िलाज़त उसमें आकर मिलेगी, और स्वच्छता तथा गन्दगीमें कितना संघर्ष होगा! पिल्लोंको यह समझ थोड़े ही होती है कि बाल्यावस्थाके समाप्त होते ही उनकी स्नेहमयी मा रोटीके एक टुकड़ेके लिए उन्हें काटने दौड़ेगी; न मृग-शावकको इस बात का ज्ञान होता है कि उसके तनिक पीछे रह जानेपर रँभानेवाली उसकी मा, कुछ बड़े होनेपर, उसको अपने पासकी घास तक न चरने देगी। और न इस अशरफुल-मख़लूक़ातको बाल्यकालमें इस बातका ज्ञान होता है कि आगे चलकर उसका जीवन इतना कष्टपूर्ण और दुःख-मय होगा। पर धीरे-धीरे—ज्यों-ज्यों जीवन-यात्रा बढ़ती जाती है, बाल्यकालकी आशा-रूपी ओसिस (Oasis)—शाद्वलभूमि—मरुभूमिमें परिवर्तित होती जाती है। उसका आभास तो युवावस्थाकी उत्तुंग चोटीसे होने लगता है। पर्वत-शिखरसे जैसे घाटीकी दोनों ओरे दिखाई पड़ती हैं—जैसे तराजूकी मूँठसे दोनों पलड़ोंके हलके-भारी होनेको बताया जा सकता है—उसी प्रकार युवावस्थामें अतीतका सिंहावलोकन और भविष्यकी प्रगति का अनुमान किया जा सकता है। कोई न करे। मैं तो कर रहा हूँ—ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार होलिका-पूजनसे होलिका-दहन और सायंकालसे पूर्व बनी दीप-बातीसे दीप-शिखाका अनुमान किया जा सकता है। मेरी अब तककी जीवन-यात्रामें एक संकीर्ण तथा छोटी, पर अति मनोहर घाटी पड़ी है। इस

घाटीका एक शिखर एक उच्च चोटीके समान इतनी दूर चले आनेपर भी स्पष्ट दिखाई पड़ रहा है।

× × . ×

सन् १६०८ की बात है। दिसम्बरका अख़ीर या जनवरीका आरम्भ होगा। चिल्ला जाड़ा पड़ रहा था। दो-चार दिन पहले कुछ बूँदा-बूँदी हो गई थी, इसलिए शीतकी भयंकरता और भी बढ़ गई थी। सायकालके साढ़े-तीन या चार बजे होंगे। कई साथियोंके साथ मैं झड़बेरीके बेर तोड़-तोड़कर खा रहा था कि गाँवके पाससे एक आदमीने ज़ोरसे पुकारा—'तुम्हारे भाई बुला रहे हैं, जल्दी घर लौट आओ।' घरको मैं चलने लगा। साथमें छोटा भाई भी था। भाई साहबकी मारका बहुत डर था, इसलिए सहमा हुआ चला जाता था। समझमें नहीं आता था कि कौनसा कुसूर बन पड़ा। पढ़नेमें कभी पिटता न था, पर पीटनेवाला पीटनेके लिए सैकड़ों बहाने निकाल लेता है। दोषी ठहरानेके लिए भेड़िएने धारके नीचेकी ओर खड़े हुए मेमनेपर पानी गंदला करनेका अभियोग लगाया था। डरते-डरते घरमें घुसा। आशंका थी कि बेर खानेके अपराधमें ही तो पेशी न हो, पर आँगनमें भाई साहबको पत्र लिखते पाया। अब पिटनेका भ्रम दूर हुआ। हमें देखकर भाई साहबने कहा—"इन चिट्ठियोंको ले जाकर मक्खनपुर डाकख़ानेमें डाल आओ। तेज़ीसे जाना, जिससे शामकी डाकमें ही ये चिट्ठियाँ निकल जाँय। ये बड़ी ज़रूरी हैं।"

जाड़ेके।दिन।तो थे ही,।तिसपर हवाके प्रकोपसे कपकपी लग रही थी। हवा मज्जा तकको ठिठरा रही थी, इसलिए हमने कानों

को धोतीसे बाँधा। लू और जाड़ेसे बचनेके लिए कान बाँधे जाते हैं। दुर्गकी रक्षाके लिए चहारदीवारी रक्षाकी जाती है, ताकि उसमें शत्रुका प्रवेश न हो सके। माने भुँजानेके लिए थोड़े चने एक धोतीमें बाँध दिये। हम दोनों भाई अपना-अपना डंडा लेकर घरसे निकल पड़े। उस समय बबूलके डंडेसे जितना मोह था, उतना इस उमरमें रायफ़लसे नहीं। प्रत्येक आर्यसमाजी उपदेशकको उस अस्त्रसे सुसज्जित देखा था। डंडेको मैं उनके पेशेका चिह्न समझता था। उस कच्ची उमरमें अनेक उपदेशक देखे थे। उनके उस कल्पित चिह्न का प्रभाव क्यों न पड़ता? फिर मेरा डंडा तो अनेक साँपोंके लिए नारायण-वाहन (गरुड़) हो चुका था। मक्खनपुर स्कूल और गाँवके बीच पड़ने वाले आमके पेड़ोंसे हर साल उससे आम झाड़े जाते थे; इस कारण वह मूक डंडा सजीव-सा प्रतीत होता था। प्रसन्नवदन हम दोनों मक्खनपुरकी ओर तेज़ीसे बढ़ने लगे। चिट्ठियोंको मैंने टोपी में रख लिया, क्योंकि कुर्तों में जेबें न थीं।

× × ×

हम दोनों उछलते-कूदते, एक ही साँस में, गाँव से ४ फलाँङ्ग दूर उस कुएँ के पास आ गये, जिसमें एक अति भयंकर काला साँप पड़ा हुआ था। कुआँ कच्चा था, और चौबीस हाथ (३६ फ़ीट) गहरा था। उसमें पानी न था। चुआकर छोड़ दिया गया था, ताकि अवकाश के समय तार करके (गलाकर) उसमें पानी किया जावे। न-जाने साँप उसमें कैसे गिर गया

था ? सम्भव है, मेंढ़क का पीछा करने में तेज़ी से उधर आ आ रहा होगा और कुएँ के पास आकर, मेंढ़क के कुएँ में गिरने पर, वह अपनी गति को न रोक सका हो। अथवा प्रणय-केलि में या नकुल-आतंक से सुध-बुध भूलकर अचानक गिरकर कूपवासी हुआ होगा। अस्तु, कारण कुछ भी हो, हमारा उसके कुएँ में होने का ज्ञान केवल दो महीने का था। बच्चे नटखट होते ही हैं। उनका नटखट होना आवश्यक है, क्योंकि नटखटपन एक शक्ति है, जो प्रत्येक बालक में होनी चाहिए। मक्खनपुर पढ़ने जाने वाली हमारी टोली पूरी बानर-टोली थी। एक दिन हम लोग स्कूल से लौट रहे थे कि हमको कुएँ में उझकने की सूझी। सब से पहले उझकने वाला मैं ही था। कुएँ में झाँककर एक ढेला फेंका कि उसकी आवाज़ कैसी होती है। उसके सुनने के बाद अपनी बोली की प्रतिध्वनि सुनने की इच्छा थी, पर कुएँ में ज्यों ही ढेला गिरा, त्यों ही एक फुसकार सुनाई पड़ी। कुएँ के किनारे खड़े हुए हम सब बालक पहले तो उस फुसकार से ऐसे चकित हो गये, मानो किलोलें करता हुआ हिरनों का झुण्ड अति समीप के कुत्ते की भोंक से चकित हो जाता है। उसके उपरान्त सभी ने उझक-उझक-कर एक-एक ढेला फेंका, और कुएँ से आने वाली क्रोधपूर्ण फुसकार पर क़हक़हे लगाये। साँप की फुसकार हमारे लिए आमोद-प्रमोद की सामग्री थी, और ऐसी साँमग्री थी, जिससे हम बहुत दिनों तक आनन्द ले सकते थे। उस अवस्था में यह ख़्याल थोड़े ही था कि बेचारे साँपके भी जान होती है, और ढेला लगने से उसे भी कष्ट होता है। हमें तो उसकी फुसकार से मतलब था। यदि वह विरोध-स्वरूप फुसकार न

मारता, तो हमारी बाल-क्रीड़ा का भी अन्त हो जाता ! हमारा तमाशा था और उसे जानके लाले पड़े थे। गाँव से मक्खनपुर जाते और मक्खनपुर से लौटते समय प्राय: प्रतिदिन ही कुएँ में ढेले डाते थे। मैं तो आगे भागकर आ जाता था, और टोपी को एक हाथ से पकड़, दूसरे हाथ से ढेला फेंकता था। यह रोज़ाना की आदत हो गई थी। साँप से फुसकार करवा लेना मैं उस समय बड़ा काम समझता था। कुए की क़ैद में इतने दिनों पड़े रहनेसे साँप भी कुछ अपने उस जीवनका अभ्यासी हो गया था, और बिना ढेला लगे, वह बादमें फुसकार भी नहीं मारता था। ढेला कुएँमें गिरा कि फन फैलाकर वह खड़ा हो जाता और ढेलों की उपेक्षा किया करता। तनिकसे ढेला लगते ही वह फुसकारसे अपना क्रोध प्रकट करता और कुएमें इधर-उधर घूमा करता, पर उस कारागारसे मुक्ति मिलनी कठिन थी। उस कारागारमें वह पड़ा रहता, और अपनी उस मूर्खतापर, जिसके कारण वह कुएँमें गिरा था, पछताया करता—यदि साँपोंमें पछतानेकी शक्ति होती है तो। अपमानको सह जाना अथवा अपमानका उत्तर न देना, या मन मसोसकर रह जाना, मनुष्य-योनिको छोड़ और किसी योनिका धर्म नहीं है। भय होनेपर कीड़े-मकोड़े और हिरन तक भाग जाते हैं, और भागकर जान बचाना ही उनका धर्म है। घायल होनेपर या पकड़े जानेपर आज़ादीके लिए भरसक प्रयत्न करगे। दाँत, सींग, डँक और पैरोंका उपयोग करगे। अक़ल के पुतलेकी भाँति पिट-कुटकर अथवा अपमानित होकर महीनों बाद दफ़ा ५०० में अदालती की ओर भागनेकी उनकी बान नहीं। उनके अदालत है ही नहीं। प्राकृतिक शासन है, जिसमें विशेष नियन्त्रण नहीं

है। फिर वह साँप चोट खानेपर प्रतिवाद-स्वरूप फुसकार क्यों न मारता—आज़ादीके लिए क्यों न तड़पता। मानो वह फुसकार की तड़प न थी, वरन् क़ैदी का उच्छ्वास था, जो प्रकट करता था कि—

"यों तो ऐ सैयाद, आज़ादीके हैं लाखों मज़े।
दामके नीचे तड़पनेका मज़ा कुछ और है।"

पर उस समय—ग्यारह वर्षकी अवस्थामें—उस वेनापूर्ण फुस-कारमें मैं उपदेश न पाता था। यह तो अबकी बात है। इसलिए, जैसे ही हम दोनों उस कुएँकी ओरसे निकले, तो कुएँमें ढेला फेंककर फुसकार सुननेकी प्रवृत्ति जाग्रत हो गई। मैं कुएँकी ओर बढ़ा। छोटा भाई मेरे पीछे ऐसे हो लिया, जैसे बड़े मृग-शावकके पीछे छोटा छौना हो लेता है। कुएँके किनारेसे एक ढेला उठाया और उझककर एक हाथसे टोपी उतारते हुए साँपपर ढेला गिरा दिया, पर मुझपर तो बिजली-सी गिर पड़ी। साँपने फुसकार मारी या नहीं—ढेला उसके लगा या नहीं, यह बात अब तक स्मरण नहीं; टोपीके हाथमें लेतेही तीनों चिट्ठियां चक्कर काटती हुई कुएँमें गिर गईं। अकस्मात् जैसे घास चरते हुए हिरनकी आत्मा गोली से हत होनेपर निकल जाती है और वह तड़पता रह जाता है, उसी भांति वे चिट्ठियां टोपीसे क्या निकल गईं, मेरी तो जान निकल गई। उनके गिरते ही मैंने उनके पकड़नेके लिए एक झपट्टा भी मारा; ठीक वैसे, जैसे घायल शेर शिकारीको पेड़पर चढ़ते देख उसपर हमला करता है। पर वे तो पहुँचसे बाहर हो चुकी थीं। उनके पकड़नेकी घबराहटमें मैं स्वयं झटकके कारण कुएँमें गिरते-गिरते बचा।

कुएँ की पारकर बैठे हम रो रहे थे—छोटा भाई ढाढ़ें मारकर और मैं चुपचाप आँखे डबडबाकर। पतीलीमें उफान आनेसे ढकना ऊपर उठ जाता है और पानी बाहर टपक जाता है। निराशा, पिटनेके भय और उद्वेगसे रोनेका उफान आता था। पलकोंके ढकने भीतरी भावोंको रोकनेका प्रयत्न करते थे, पर कपोलोंपर आंसू ढलक ही जाते थे। माँकी गोदकी याद आती थी। जी चाहता था कि मा आकर छातीसे लगा ले और लाड़-प्यार करके कह दे कि कोई बात नहीं, चिट्ठियां फिर लिख ली जाँयगी। तबीयत करती थी कि कुएमें बहुतसी मिट्टी डाल दी जाय और घर जाकर कह दिया जाय कि चिट्ठी डाल आये, पर उस समय झूठ बोलना मैं जानताही न था। घर लौट-कर सच बोलनेसे रुईकी भांति धुनाई होती। मारके ख़यालसे शरीर ही नहीं, मन काँप जाता था। अकारण अथवा कुसूर-पर भी पिटने से हृदयकी कोमल कली मुरझा जाती है। मान-सिक और शारीरिक विकास रुक जाता है। सब बोलकर पिटनेके भावी भय और झूठ बोलकर चिट्ठियोंके न पहुंचने की ज़िम्मेदारीके बोझसे दबा मैं बैठा सिसक रहा था। पासही रास्तेपर एक स्त्री अपने बालकका हाथ पकड़े जा रही थी। उसे देखकर तो करुणा-सागर ही उमड़ आया। हृदयके उफानने पलकोंके ढकनेको हटा दिया। फाटक खुल गये। अश्रु-धारा बह चली। इसी सोच-विचारमें पन्द्रह मिनट होने आये। देर हो रही है, और उधर दिनका बुढ़ापा बढ़ता जाता था। कहीं भाग जानेको तबीयत करती थी, पर पिटनेका भय और ज़िम्मे-दार की दुधारी तलवार कलेजेपर फिर रही थी।

× × ×

असंप्रज्ञात समाधिसे मायाके बन्धन टूट जाते हैं। दृढ़ संकल्पसे दुविधाकी बेड़ियाँ कट जाती हैं। मेरी दुविधा भी दूर हो गई। कुएमें घुसकर चिट्ठियोंको निकालनेका निश्चय किया। कितना भयङ्कर निर्णय था! पर जो मरनेको तैयार हो उसे क्या? मूर्खता अथवा बुद्धिमत्तासे किसी कामके करनेके लिए कोई मौतका मार्ग ही स्वीकार कर ले, और वह भी जान-बूझकर, तो फिर वह अकेला संसारसे भिड़नेको तैयार हो जाता है। और फल? उसे फलकी क्या चिन्ता! फल तो किसी दूसरी शक्तिपर ही निर्भर है। शुभ घड़ी और शुभ मुहूर्तके अनेक कामोंका दुखद फल होता है। शुभ घड़ी और मुहूर्त बुरे नहीं हैं, पर उनमें किया हुआ फल अपने वशकी बात नहीं। मुझे अपने निर्णयकालकी घड़ी और मुहूर्तका पता नहीं, पर मेरा निर्णय, मेरी अबकी दृष्टिसे, अति भयंकर था। उस समय चिट्ठियाँ निकालनेके लिए मैं विषधरसे भिड़नेको तैयार हो गया! पांसा फेंक दिया था। मौतका आलिंगन हो या साँपसे बचकर दूसरा जन्म—इसकी कोई चिन्ता न थी; पर विश्वास यह था कि डंडेसे साँपको पहले मार दूँगा, तब फिर चिट्ठियाँ उठा लूँगा। बस, इसी दृढ़ विश्वासके बूतेपर मैंने कुएँमें घुसनेकी ठानी।

छोटा भाई रोता था, और उसके रोनेका तात्पर्य था कि मेरी मौत मुझे नीचे बुला रही है—यद्यपि वह शब्दोंसे यह न कहता था। वास्तवमें मौत सजीव और नग्न रूपसे कुएँमें बैठी थी, पर उस नग्न मौतसे मुठभेड़के लिए मुझे भी नग्न होना पड़ा। छोटा भाई भी नङ्गा हुआ। एक धोती मेरी, एक छोटे भाईकी, एक

चनेवाली, दो कानोंसे बँधी हुई धोतियाँ—पाँच धोतियाँ और कुछ रस्सी मिलाकर कुएँकी गहराईके लिए काफ़ी हुईं। हम लोगोंने धोतियाँ एक दूसरीसे बाँधी और खींच-खींचकर आज़मा लीं कि गाँठें कड़ी हैं, खुलेंगी नहीं। अपनी ओरसे कोई धोखेका काम न रखा। धोतीके एक सिरेपर डंडा बाँधा और उसे कुएँ में डाल दिया। दूसरे सिरेको डेंग (वह लकड़ी जिसपर चरम या पुर टिकता है) के चारों ओर एक चक्कर देकर और एक गाँठ लगाकर छोटे भाईको दे दिया। छोटा भाई केवल आठ वर्ष का था, इसीलिए धोतीको डेंगसे कड़ा करके बांध दिया, और तब उसे खूब मज़बूतीसे पकड़नेके लिए कहा। मैं कुएँ में धोतीके सहारे घुसने लगा। छोटा भाई फिर रोने लगा। मैंने उसे आश्वासन दिलाया कि मैं कुएँके नीचे पहुँचते ही साँपको मार दूँगा और मेरा विश्वास भी ऐसा ही था। कारण यह था कि उससे पहले मैंने अनेक सांप मारे थे। दो-एकको तो जूते या कंकर-पत्थरसे मारा था। मैं यह बात उस समयसे ही जानता था कि साँपको अपने दांई ओर होकर मारना चाहिए, और उसको मारनेके लिए सबसे अच्छी लकड़ी अरहरकी लग—सांट—है। यदि वह सांपके एक भी कहीं—पूँछको छोड़कर—लग जाय, तो वहीं-का-वहीं रह जाता है। उसकी हड्डियोंकी बनावट ऐसी होती है कि बेत या सांटके लगते ही उसकी हड्डी बेकार-सी हो जाती है, और वह वहीं पेचताब खाने लगता है, तब तक दूसरी चोटका अवसर मिल जाता है। भागते हुए काले सांपोंको मैंने इसी प्रकार कई बार मारा था। दो-एक बार काटनेसे बाल-बाल बचा था, इसलिए कुएँमें घुसते समय मुझे सांपका तनिक भी भय न था। ऐसा न होता, तो शायद मैं कुएँ में घुसनेका साहस न करता।

हृदय का तूफ़ान तो पहले ही शान्त होगया। जो अश्रु-धारा बहाई थी, वह अपनी असमर्थता पर कि कुएँ से चिट्ठियाँ कैसे निकाली जायँ, पर जब धोतीके साधनकी सूझ हुई, तब तो सन्तोष और प्रसन्नताकी सीमामें पहुंच गया था। इस समय भी मेरा क़द मझला है, उस समय तो निरा बालक था। धोतीके सहारे उतरते समय ज़ोर भुजाओं पर ही अधिक था, क्योंकि पैरोंकी पकड़में धोती आती न थी। जैसे-जैसे नीचे उतरता जाता था, हृदयकी धड़कन बढ़ती जाती थी कि कहीं साँप न मरा, तो चिट्ठियाँ कैसे उठाऊँगा। कुएँ के धरातलसे जब चार-पाँच गज़ रहा हूँगा, तब ध्यान से नीचेकी ओर देखा, अक़ल चकरा गई। साँप फन फैलाये धरातलसे एक हाथ ऊपर उठा हुआ लहरा रहा था। पूँछ और पूँछके समीपका भाग पृथ्वीपर था, आधा अग्रभाग ऊपर उठा हुआ मेरी प्रतीक्षा कर था था। नीचे जो डंडा बँधा था, मेरे उतरनेकी गतिसे इधर-उधर हिलता था। उसीके कारण शायद मुझे उतरते देख साँप घातक चोटके आसन पर हो बैठा था। सपेरा जैसे बीन बजाकर काले साँपको खिलाता है, और साँप क्रोधित हो फन फैलाकर तथा फुसकार मारकर चोट करता है, ठीक उसी प्रकार सांप तैयार था। उसका प्रतिद्वन्दी—मैं—उससे कुछ हाथ ऊपर धोती कपड़े लटक रहा था। धोती डेगसे बँधी होनेके कारण कुएँ के बीचोंबीच लटक रही थी, और मुझे कुएँ के धरातलकी परिधिक बीचोंबीच उतरना था। इसके मानी थे सांप से डेढ़-दो फ़ीट—गज़ नहीं—की दूरी पर साँप पैर रखते ही चोट करता। स्मरण रहे, कच्चे कुएँ का व्यास बहुत कम होता है। नीचे तो वह डेढ़ गज़ से अधिक होता ही नहीं। ऐसी दशा में कुएँ में मैं साँपसे अधिक-से-अधिक

चार फ़ीट की दूरी पर रह सकता था, वह भी उस दशा में। जब साँप मुझसे दूर रहनेका प्रयत्न करता; पर उतरना तो था कुएँ के बीचमें क्योंकि मेरा साधन बीचोंबीच लटक रहा था। ऊपरसे लटककर तो सांप नहीं मारा जा सकता था। उतरना तो था ही। थकावटसे ऊपर चढ़ भी नहीं सकता था। अब तक अपने प्रतिद्वन्दी को पीठ दिखानेका निश्चय नहीं किया था। यदि करता भी, तो कुएँ के धरातलपर उतरे बिना क्या मैं ऊपर चढ़ सकता था ? धीरे-धीरे उतरने लगा। एक-एक इंच ज्यों-ज्यों मैं नीचे उतरता जाता था, त्यों-त्यों मेरी एकाग्रचित्तता बढ़ती जाती थी। एकाग्रचित्तमें—चित्तवृत्ति—निरोधमें—जो विचार-रत्न सूझते हैं, वे व्यग्रचित्तमें नहीं। टूटे हीरेका मूल्य नहीं होता, जो साबित हीरेका। मुझे भी एक सूझी। दोनों हाथोंसे धोती पकड़े हुए मैंने अपने पैर कुएँ की बग़लसे लगा दिये। दीवारसे पैर लगाते ही कुछ मिट्टी नीचे गिरी, और साँपने फू करके उस पर मुह मारा। मेरे पैर भी दीवार हट गये, और मेरी टांगे कमरसे समकोण बनाती हुई लटकती रहीं, पर इससे साँपसे दूसरी और कुएँ की परिधिपर उतरने का ढंग मालूम होगया। तनिक झूलकर मैंने अपने पैर कुएँ की बग़लसे सटाये, और कुछ धक्के साथ अपने प्रतिद्वन्दीके सम्मुख कुएकी दूसरी ओर डेढ़ गज़ पर—कुएँके धरातल पर खड़ा होगया। आंखें चार हुईं। शायद एक दूसरे ने पहचाना। सांपको चक्षुश्रवा कहते हैं। मैं स्वय चक्षुश्रवा होरहा था। अन्य इन्द्रियोंने मानो सहानुभूतिसे अपनी शक्ति आँखोंको दे दी हो। शरीरमें सहानुभूतिकी पीड़ा होती है। पैरमें चोट लग जानेसे गिल्टी उठ आती है। फिर इन्द्रियोंका विपत्तिमें इन्द्रियविशेषका सहायक होना कोई आश्चर्य

नहीं। मैं तो यही महसूस करता हूँ। साँपके फनकी ओर मेरी आँखें लगी हुई थीं कि वह कब किस ओरको आक्रमण करता है। साँपने मोहनी-सी डाल दी थी। शायद वह मेरे आक्रमण-की प्रतीक्षामें था, पर जिस विचार और आशाको लेकर मैंने कुएँ में घुसनेकी ठानी थी, वह तो आकाश-कुसुम था। मनुष्यका अनुमान और भावी योजनाएँ कभी-कभी कितनी मिथ्या और उल्टी निकलती हैं। अनुमानित सफलताकी आशा-रज्जुसे बँधा यह मानवी पुतला न मालूम क्या-क्या नहीं करता और कहाँ-कहाँ नहीं जाता। उस आशा-रज्जुके टूटते ही वह पुतला मांसका एक लोथड़ा ही रह जाता है। आशाके बिना जीवनका कुछ आनन्द ही नहीं। मुझे साँपका साक्षात् होते ही अपनी योजना और आशाकी असम्भवता प्रतीत हो गई। डंडा चलानेके लिए स्थान ही न था। लाठी या डडा चलानेके लिए काफ़ी स्थान चाहिए, जिसमें वह घुमाया जा सके। साँपको डंडेसे दबाया जा सकता था, पर ऐसा करना मानो तोपके मुहरेपर खड़ा होना था। यदि फन या उसके समीपका भाग न दबा, तो फिर वह पलटकर ज़रूर काटता, और फनके पास दबानेकी कोई सम्भावना भी होती, तो फिर उसके पास पड़ी हुई दो चिट्ठियोंको कैसे उठाता। दो चिट्ठियाँ उसके पास उससे सटी हुई पड़ी थीं और एक मेरी ओर थी। मैं तो चिट्ठियाँ लेने ही उतरा था। हम दोनों अपने पैंतरोंपर डटे थे। उस आसनपर खड़े-खड़े मुझे चार-पाँच मिनट हो गये। दोनों ओर से मोरचे लगे हुये थे, पर मेरा मोरचा कमज़ोर था। कहीं सांप मुझपर झपट पड़ता, तो मैं—यदि बहुत करता तो—उसे पकड़कर, कुचलकर मार देता, पर वह तो अचूक तरल विष मेरे शरीरमें पहुँचा ही देता और अपने

साथ-साथ मुझे भी ले जाता। अब तक सांपने वार न किया था, इसलिए मैंने भी उसे डंडेसे दबानेका ख़याल छोड़ दिया। ऐसा करना भी उचित न था। अब प्रश्न यह था कि चिट्ठियां कैसे उठाई जाँय? बस, एक सूरत थी। डंडेसे सांपकी ओर से चिट्ठियोंको अपनी ओर सरकाया जाय। यदि सांप टूट पड़ा, तो कोई चारा न था। कुर्ता था, और कोई कपड़ा भी न था, जिसे सांपके मुँहकी ओर करके उसके फनको पकड़ लूँ। मारना या बिल्कुल छेड़खानी न करना—ये दो मार्ग थे। सो पहला मेरी शक्तिके बाहर था।

डंडेको लेकर ज्यों ही मैंने सांपकी दाईं ओर पड़ी हुई चिट्ठीकी ओर उसे बढ़ाया कि सांपका फन पीछेको हुआ। धीरे-धीरे डंडा चिट्ठीकी ओर बढ़ा, और ज्योंही चिट्ठीके पास पहुँचा कि फूंके साथ काली बिजली तड़पी और डंडेपर गिरी। हृदयमें कम्प हुआ, और हाथोंने आज्ञा मानी डंडा छूट पड़ा। मैं तो न मालूम कितना ऊपर उछल गया। जान-बूझकर नहीं, यों ही बिदककर। उछलकर जो खड़ा हुआ, तो देखा डंडेके सिरेपर तीन-चार स्थानोंपर पीब-सा कुछ लगा हुआ है। वह विष था। साँपने मानो अपनी शक्तिका सर्टिफ़िकेट सामने रख दिया था, पर मैं तो उसकी शक्तिका पहले ही से क़ायल था। उस सार्टिफ़िकेटकी ज़रूरत न थी। साँपने लगातार फूँ-फूँ करके डंडेपर तीन-चार चोटें कीं। वह उपदेशकी डंडा पहली बार ही उस भाँति अपमानित हुआ था, या वह साँपका उपहास कर रहा था।

उधर ऊपर, फूँ-फूँ और मेरे उछलने और फिर वहीं धमाके से खड़े होनेसे, छोटे भाईने समझा कि मेरा काम तमाम होगया

और बन्धुत्वका नाता फूँ-फूँ और थमाकेसे टूट गया। उसने ख़याल किया कि साँपके काटनेसे मैं गिर गया। मेरे कष्ट और विरहके ख़यालसे उसके कोमल हृदयको धक्का लगा—भ्रातृ-स्नेह के ताने-बानेको चोट लगी। उसकी चीख़ निकल गई। सिनेमा में करुणाजनक दृश्य देखकर मैं इस आयुमें भी रो पड़ता हूँ। विरह-वर्णनमे मेरी आँखें अबभी सजल हो जाती हैं। शफ़ाख़ाने में दूसरेके—ग़ैरके—चीरा लगते देख वहुतोंको बेहोशी आ जाती है। मैं इस बातका क़ायल हूँ कि

"खूँ रगे मजनूंसे निकला, फ़स्द लैलीकी जो ली।"

फिर छोटे भाईकी आशंका बेजा न थी, पर उस फूँ और धमाकेसे मेरा साहस कुछ बढ़ गया। दुबारा फिर उसी प्रकार लिफ़ाफ़ेको उठानेकी चेष्टा की। अबकी बार साँपने वार भी किया और डंडेसे चिपट गया। डंडा हाथसे छूटा तो नहीं, पर झिझक—सहम अथवा आतंक—से अपनी ओर को खिंच गया, और गुँजलक (Coils) मारता हुआ साँपका पिछला भाग मेरे हाथोंसे छू गया। उफ़! कितना ठंडा था। डंडा मैंने एक ओर को पटक दिया। यदि उसका दूसरा वार पहले होता, तो उछल-कर साँपपर गिरता और बचता नहीं; लेकिन जब जीवन होता है, तब हज़ारों ढंग बचने के निकल आते हैं। वह दैवी कृपा थी। डंडाके मेरी ओर खिंच आनेसे मेरे और साँपके आसन बदल गये। मैंने तुरन्त ही लिफ़ाफ़े और पोस्ट-कार्ड बटोर उठा लिये। चिट्ठियों को धोतीके छोरमें बाँध दिया, और छोटे भाईने उन्हें ऊपर खींच लिया।

× × ×

डंडे को साँपके पाससे उठाने में भी बड़ी कठिनाई पड़ी। साँप उससे अलग होकर उसपर धरना देकर बैठा था। जीत तो मेरी हो चुकी थी, पर अपना निशान गवाँ चुका था। आगे हाथ बढ़ाता, तो साँप हाथपर वार करता, इसलिए कुएँ की लगालसे एक मुट्ठी मिट्टी लेकर मैंने उसकी दाईं ओर फेंकी। वह उसपर झपटा, और मैंने दूसरे हाथसे उसकी बाईं ओर से डंडा खींच लिया, पर बात-की-बातमें उसने दूसरी ओर भी वार किया। यदि बीचमें डंडा न होता, तो पैरमें उसके दाँत (Fangs) गड़ गये होते।

विवाह और जीतका भी भोर बड़ा विकट होता है। ऊपर चढ़ना कोई आसान काम न था। केवल हाथोंके सहारे पैरोंको बिना कहीं लगाये हुए ३६ फ़ीट ऊपर चढ़ना मुझसे अब नहीं हो सकता। १५-२० फ़ीट बिना पैरोंके सहारे केवल हाथोंके बल चढ़ने की हिम्मत रखता हूँ—कम ही—अधिक नहीं, पर उस ग्यारह वर्षकी आयुमें ३६ फ़ीट चढ़ा। बाहें भर गईं थीं। छाती फूल गई थी। धौंकनी चल रही थी, पर एक-एक इंच सरक-सरककर अपनी भुजाओंके बल मैं ऊपर चढ़ आया। यदि हाथ छूट जाते, तो क्या होता, इसका अनुमान करना कठिन नहीं है। ऊपर आकर, बेहाल होकर थोड़ी देर पड़ा रहा। देहको झाड़-झूड़कर धोती और कुर्ता पहना। फिर किशनपुरके लड़केको, जिसने ऊपर चढ़नेकी मेरी जद्दोजहद्को देखा था, ताकीद करके कि वह कुएँ वाली घटना किसीसे न कहे, हम लोग आगे बढ़े।

सन् १९१५ में मैट्रीक्यूलेशन पास करनेके उपरान्त यह घटना मैंने माको सुनाई। सजल नेत्रों से माने मुझे अपनी

गोदमें ऐसे बैठा लिया, जैसे चिड़िया अपने बच्चोंको डैनेके नीचे छिपा लेती है।

× × ×

कितने अच्छे थे वे दिन! उस समय रायफल न थी, डंडा था; और डंडेका शिकार—कम-से-कम उस साँप का शिकार राय-फ़लके शिकारसे कम रोचक और भयानक न था। बालपन की वह घटना मैं कभी भूल नहीं सकता। उस घटना के साक्षी पर-मात्माके अतिरिक्त हम तीन हैं; छोटे रुग्ण भाई पं०जगन्नाथ शर्मा, पाती और स्वयं मैं। शायद पासके वृक्ष भी हैं, जो यों ही खड़े हैं। साँप उसी कुएँ में दबा पड़ा है। कुएँ के स्थान का चिन्ह अब भी है, पर वे दिन नहीं हैं, न वह उमंग! अब तो बस—

"मसर्रत हुई, हँस लिये दो घड़ी;
मुसीबत पड़ी, रोके चुप हो रहे।"

कुफ़्र टूटा

मानव जीवनकी—विशेषकर शिकारी जीवनकी—एक कमज़ोरी है नाम की चाह। मैं उस कमज़ोरी से शून्य न था। नामकी चाह जीवनकी एक अवस्था विशेष में हुआ करती है, अथवा किसी वस्तु या ध्येयकी प्राप्ति न होने तक। बाद में वह भले आदमियोंसे ऐसे छूट जाती है, जैसे सूर्यकी किरणोंसे पत्तोंपर पड़े ओस-कण। और फिर पहाड़पर कोई कितनी ही हिंसा करे; कितने ही कारतूस फूँक डाले; पर जब तक कोई बाघ न मार ले, तब तक वह शिकारी नहीं कहलाता। लोग मेरे साहससे परिचित थे, पर मुझे भय था कि कहीं टिहरीवाले मुझे टिहरी के एक लम्बू 'शिकारी' की भाँति केवल चिड़ीमार ही न समझ लें। लम्बू शिकारी राज्यके एक पदाधिकारी, लम्बे क़दके व्यक्ति थे। उन्हें शिकार खेलते बीसियों वर्ष बीत गये थे, और बीसियों बार उन्हें बाघ मिला होगा; पर वे कलेजेवाले न थे। बाघको देखकर उनका हृदय धौंकनीकी भाँति धकधक हो जाता था, और मारनेके स्थानमें वे उसे भगाने में ही भला

समझते थे। टिहरीवाले उन्हें चिड़ीमार कहते थे और गाँववाले मनहूस। मुझे इन दोनों नामों से परहेज था, पर अब तक—अन्य अनेक जीवोंके मारनेके उपरान्त तक—मैंने कोई बाघ न मारा था, इस लिए ड्राइंग-मास्टर और ड्रिल-मास्टर —श्री लक्ष्मी दत्त और श्री भूपालसिंह—के साथ भूखा-पयासा जंगलोंमें घूमा करता। टिहरीसे जाने वाली सड़कों की खाक छानी। तनिक सुना कि बाघ ने अमुक स्थान पर गाय मारी है; बस, हम उस ओर ऐसे दौड़े जाते थे, जैसे शवकी गन्ध पाकर सियार। वहाँ पहुँचकर, यह मालूम करके कि गाय की हड्डियाँ तक नहीं बची, हम लोग झक मारकर लौटते, और लौटनेमें ऐसे लजाते, मानो किसी पापकृत्यमें पकड़े गये हों। गंगाजीके पुलके पास भूपालू की दूकान के सामने होकर निकलना तो एक परीक्षा पास करना था। पढ़ाईकी परीक्षा पास करना तो सरल काम था, पर दुकान पर बैठे हुये व्यक्तियोंकी संयुक्त आवाज—'क्यों साहब, बाघ मारा ?' का उत्तर देना घोर अपमानजनक समझता था। एक बार मुझे ऐसा ही उत्तर देना पड़ा था, और मुँह से 'नहीं' निकालनेमें मुँहपर कालिख-सी लग गई थी। उसके बाद उस दुकान के सामने से हम लोग; लौटती बार; दिन में कभी नहीं निकले। यदि दिनमें लौटनेका समय होता, तो हम दुकान से दूर ही रात कर लेते, और चोरों की भांति दुकान के सामने से एक-एक करके निकलते। मैं तो सबसे पीछे बन्दूक़ को शरीरसे सटाकर ऐसा निकलता, मानो कोई देहाती डंडा लिये जा रहा हो। दुकान निकल जाती, तो जान में जान आती। आगे चलकर अपने साथियोंसे मिलता, और मन-ही-मन कहता—'धिक्कार है हम लोगोंको जो अब तक बाघ नहीं मारा !'

घरमें घुसना भी दुर्गभेद-सा था । धीरे से किवाड़ खोल कर, भीतर घुसता । चारपाई, किताबें और क़लम-दवात स्वच्छ रखी देखकर, श्रीमती शर्मासे गृह-प्रबन्धके मिस कोई बात न कहने पाता, तब तक मधुर मुसकान से शुभागमन करते हुए, दबी ज़बान से कहे हुए—'बाघ मिला ?'—शब्दों को सुनकर मैं झेंप जाता, और 'भोजन तैयार है ?' कहकर मैं मुसकराहट में ही बात टाल जाता; पर वह पारस्परिक मुसकान हृदयका स्वयंसिद्ध सूत्र थी। आर्थिक संकटसे पीड़ित व्यक्तिके लिए दाम्पत्य-सुख एक टानिक है, जो जीवन की कुछ घड़ियाँ बढ़ा देता है। घर पहुँच कर पहले 'बाघ नहीं मिला' का फाटक पार कर के मैं एक ऐसे उद्यापन में पहुँच जाता था, जहाँ चिन्ता-ज्वालाएँ शरीरको झुलसा नहीं सकती थीं, और न जहाँ बाघके शिकार का भूत ही प्रवेश कर सकता था । भोजन करके लेट रहता, और कोई पुस्तक लेकर पढ़ने लगता । सुख का तिलस्म टूट जाता और मनकी उधेड़-बुनका ताँता पुर जाता । ऊपर छतकी ओर कभी दृष्टि पड़ती, तो गौरवा और गौरइया का जोड़ा बैठा दिखाई देता । सोटके खोखलेमें दोनों कितने सुखी थे ! उन जैसे सुखी दम्पति मनुष्योंमें कम ही होंगे ।

अनादिकालसे मानव-लीला का मूकद्रष्टा, समय, अपनी अनन्तकी पोथी में घंटा, घड़ी, दिन और मास लिखता जाता था, और हम लोग बाघ मारनेकी ध्रुव धुन में आकाश-पातालके कुलाबे मिलाते थे। जंगलोंमें बकरा और कुत्ता बाँधते लाशों पर बैठते। पर बाघके दर्शन तक न होते थे। एक दिन खिजकर मैंने यहाँ तक कह डाला कि मुझे बाघ दिखाई पड़ जाय, तो मैं उससे हाथापाई ही कर डालूँ। नतीजा जो होगा,

सो उसकी क्या चिन्ता ? प्लेग हैजेकी मृत्यु से तो वह शानदार होगी । एक बार समाचारपत्रोंमें तो मेरा बाघ-युद्ध निकल जायगा । पर दूध के उफानकी भाँति वह आवेष शान्त हो जाता । इधर दो-एक मास बीतनेसे कुछ बेशर्मी भी आ गई थी । नवीन बधू पहले लम्बी लाज काढ़ कर निकलती है, अपने पति तकसे झेंपती है; पर उस अमर बूढ़े दर्शक—समय—के आवर्तमें पड़कर घूँघटके पट खोल देती है । हम लोगोंकी कुछ ऐसी दशा हो चली थी । जो कोइ पूछता, तो कह देते—'क्या करें, बाघ मिला ही नहीं । ।बाघ देखकर हम लोग भाग आयँ तो लज्जा की बात है । भाग्य चेतेगा तो बाघ मिलेगा और मरेगा । वह नटनागर जैसे नचाता है, नाचते हैं । नटनागर के करिश्मे हैं, जिन्हें कठपुतली बने देख रहे हैं ।'

× × ×

इसी प्रकार बूढ़े बाज़ीगर ने दिन-रात रूपी पीले और काले साठ-सत्तर मुँगिया (दाने) पिरोये, और दिसम्बर आ पहुँचा । एक दिन—न मालूम किस दिन—सांयकालको फावड़ेसे गोभी के लिये मैं बाड़ा गोड़ रहा था, कि सुपरिन्टेन्डेन्ट बग़ीचा-दरबार के लड़के अज़ीज़ने मकान में भागते हुए प्रवेष किया और हाँफते हुए कहा—'शिमलासूके सामने भिलंगना पार बाघने गाय मारी है, और अब वह बैठा उसे खा रहा है ।' सुनकर मानो मुर्दे में जान आगई हो । निश्चय करनेके लिए अविश्वास भाव से मैंने पूछा—'अभी तक खा रहा है ?—तुमने खुद देखा है ?'

अज़ीज़—'हाँ साहब, मैंने अपनी आँखोंसे देखा है वह अब भी खा रहा है ।'

मैं—'गाय मारी कब थी ?'

अज़ीज़—'आज दोपहरके दो बजे।'

मैं—"और तबसे अब तक डटा हुआ है ?"

अज़ीज़—'जी हाँ, अब तक भी खा रहा है।। नीचे होकर आदमी निकलते हैं और ऊपर मार्गसे बीस गज़की ऊँचाई पर वह जुटा हुआ है।'

मैं—'अजीब बाघ है; पर अब साढ़े चार बजे हैं, शिमलासू पहुँचते-पहुँचते पाँच बज जायँगे। अँधेरा होने लगेगा। अच्छा, भिलंगनासे उस पार वह जगह कितनी दूर होगी ?'

अज़ीज़—'दूरी तो आप जानें। उस सामनेवाले मकानसे डेढ़-दो सौ क़दम होगा।।'

मैं—(तैयार होते हुए)—'तो फिर तीन-साढ़े तीन सौ गज़के लगभग हुआ। चलते हैं। देखें तो क्या बात है। अज़ीज़ तुम जाकर ड्रिल-मास्टर को बुला लाओ। ड्राइंग-मास्टर लक्ष्मी-दत्त को बुलानेमें तो देर होगी।'

× × ×

हम तीनों शिमलासूकी लाटसाहब-वाली कोठीके अहातेमें उस स्थान पर जाकर खड़े हुए, जहाँ से ठीक नीचे भिलंगनामें स्वामी रामतीर्थ डूबे थे। जब-जब मैं शिमलासूके पास भिलंगना की ओरको जाया करता था, तभी मुझे 'युवा संन्यासी' कविताका वह पद--

'चिरसहचरी रियाज़ी छोड़ी, रम्यतटी रावी छोड़ी;
शिखा-सूत्र के साथ हाय, उन बोली पंजाबी छोड़ी।'

स्मरण हो आता था, और खयाल आता था कि इसके आगे ऐसा कुछ जोड़ दिया जाय कि उस ब्रह्म-स्वरूपने अन्नमय-कोष--पार्थिव शरीर--भी त्याग दिया; पर उस दिन उसी स्थानपर विचारधारा बाघकी ओर थी। आँखें फाड़-फाड़ कर भिलंगनाकी दूसरी ओर देखा, पर खालेके ऊपर, उस समय, इतनी दूरसे क्या दिखाई पड़ सकता था ? बाघ कोई अग्निपुंज थोड़े ही था, जो अँधेरेमें चमके ! हताश होकर हम लोग वहीं खड़े रहे। तबीयत करती थी कि किसी प्रकार पंख लग जायँ, तो उड़कर भिलंगना पार करूँ। बीचमें नदी और नदीके धरातल तक पहुँचनेको एक-दो फ़र्लांग की दूरी थी। वैसे पार हो सकते थे पर घाट नहीं मालूम था। पुल वहाँसे एक मील था। तात्पर्य यह कि कुछ कर नहीं सकते थे। अन्तमें हम लोगोंने यह निश्चय किया कि बाघ अँधेरेमें तो खाने अवश्य आया होगा, और यदि खाता ही रहा, तो फिर प्रातः काल नहीं आवेगा, इसलिए हवामें ही दो फ़ायर कर दिये जायँ, जिससे वह गायकी लाशसे भाग जायँ और भूखके कारण फिर उसके आनेकी सम्भावना रहे।

बारह नम्बर बन्दूक़से दो फ़ायर कर दिये, और दुखी होकर हम लोग लौट पड़े। अज़ीज़ सलाम करके अपने घर चला गया।

लौटती बार हम लोग ग्लानि और उत्साहके भँवरमें पड़े हुए थे। कल कितने बजे आना चाहिए, बन्दूक़की आवाज़से वह कहीं फिर आवे ही नहीं, ऐसे ही प्रश्न करते हुए हम घर पहुँच गये। चाय पिलाकर ड्रिल-मास्टर को विदा किया

और प्रातःकाल तड़के ही आने को कहा। भोजन करके बाघके विषयमें सोचता हुआ सो गया।

प्रातःकाल भूपाल सिंह और मैं उषाकालमें ही शिमलासू जा पहुँचे। सूर्य निकलने तक हम लोग वहीं टहलते रहे। ज्यों ज्यों सूर्य ऊपर आता जाता था, त्यों-त्यों सामनेवाला खाला--जहाँपर बाघने गाय मारी थी--स्पष्ट होता जाता था। उस खालेसे हम लोग पश्चिमकी ओर थे। बीच में भिलंगना थी, और वह खाला उत्तरसे दक्षिणको जानेवाली पर्वतश्रेणीमें था, इस लिए सूर्य अभी तक ओट में था। प्रकाश होने पर खालेमें कोई चीज़ हिलती दिखाई दी। वह बाघ था। मांसको नोच-नोचकर खानेमें वह हिलता-डुलता था। रायफलसे निशाना लेनेका प्रयत्न किया। पर रायफलकी पिछली मक्खी (Backsight) से वह ठीक सीधमें न आता था। इसलिए हम लोग अधिक प्रकाश की प्रतीक्षामें खड़े रहे। जैसे ही सूर्यका अर्ध गोला डाँडेकी चोटीपर दिखाई दिया, खाला और भिलंगनाकी घाटी प्रकाशमय हो गई। किरणोंमें धूलकण चलते प्रतीत होने लगे। भूपालसिंह मेरे पीछे रायफल लिये खड़े थे। मैं दूरबीन लगा रहा था। बन्दूक मेरे आगेवाले पेड़के सहारे रखी थी। बाघका असाधारण आकार देखकर मेरी बाछें खिलगईं। जैसे ही दूरबीन मैंने भूपालसिंहकी ओर बढ़ाई और उन्होंने रायफल को मेरी ओर किया कि धाँय से फायर होगया। कान तो फूट-से गये। भूपालसिंहका चेहरा पीला पड़ गया। एक-चौथाई इंचसे मैं बच गया। २२० ग्रेनकी गोली मेरे कोटमें होकर आगे के पेड़में सर्र करती हुई घुस गई। तनिक एक-चौथाई इञ्च शरीरकी ओरको और होती तो अँतड़ियोंको भूनती हुई रीढ़को

तोड़कर निकल जाती। अरे क्या होगया! मेरे मुँहसे सुनकर भूपालसिंहको होश आया, और मेरे बचनेपर अपने भाग्यको सराहा। बात यह हुई थी कि मैंने सेफ़्टीकैच (Safety Catch) को, चलानेके लिए नालकी ओर कर रखा था। भूपालसिंहने इसका ख़याल न किया, और उनकी उँगली नीचेके घोड़े (Trigger) पर थी। मुझे रायफ़ल देनेमें घोड़ा दब गया, और फ़ायर होगया। फ़ायरकी आवाज़ सुनकर बाघ लाशपर से उठा। खालेके ऊपर आया और अपनी मस्त चालसे जंगल की ओर बढ़ा। उसने समझा होगा कि दिनचर आ गये, जीवन का भय है, चलो, पेट भर गया, अब चैनसे सोवें। मरोरा चालसे (ऐंठसे) दाएँ-बाएँ देखता हुआ चला जाता था। हम लोग हाथ मलते ही रह गये! बहुत हाथ-पैर पीटे, रायफ़ल सँभालते-सँभालते बाघ आँखसे ओझल होगया। हम लोगोंने भिलंगना पार करनेकी ठानी, और चक्कर काटकर बर्फ़-से ठंडे जाँघ-भर, पानीमें भिलंगना पार की। शीघ्र ही बाघकी अगाई काटनेका प्रयत्न किया, पर बाघ कहीं दिखाई न पड़ा। न मालूम कहाँ विलीन होगया। तब मैंने भूपालसिंहसे कहा—"अशकुन तो सवेरे ही होगया, काहे को ढूँढ़ते-फिरते हो। ऐसे बाघ नहीं मिला करते। चलो, लाश देखें कितनी शेष है।"

जाकर लाश जो देखी, तो बड़ी प्रसन्नता हुई। बाघने शेष लाशको धूल और कंकरोंसे दबा दिया था। इसका अर्थ था बाघके उस शेष लाशको फिर खानेके लिए आना। यदि खुली छोड़ देता, तो गिद्ध और चीलें मिनटोंमें उसे चट कर जातीं। इसके अतिरिक्त, गीदड़ोंका भी भय था। अपने भोजनको गिद्ध और गीदड़से सुरक्षित रखनेके लिए बाघ कभी-कभी पेड़पर

लाश टाँग जाता है। अफ़रीकामें तो कभी-कभी १८ फ़ीट ऊँचे पर वृत्तों में अधखाये हिरन मिलते हैं। हम लोगोंने लाशको घास-फूँससे और ढँक दिया, और घर लौट आये।

सायंकालको तीन बजे हम तीनों—लक्ष्मीदत्त, भूपालसिंह और मैं—तीन बन्दूकें लेकर गायकी लाशके समीप पहुँच गये। साथमें एक रस्सी और रातका खाना था। पासके मकानसे फावड़ा और कुदाल ले लिया, और दो-तीन आदमी भी ले लिये। मकान डोभाल ब्राह्मणोंका था, और उनकी ही गाय मारी गई थी। उन्होंने हम लोगोंसे कहा—'आप लोग वृथा ही परिश्रम करते हैं। इस बाघने मेरी ही सात-आठ गायें खा डालीं। पड़ोसकी दस-बारह भैंसें खा लीं। दस-पन्द्रह वर्षसे यह मार कर रहा है, और दो-अढ़ाई सौ गाय-भैंस खा चुका है। बहुत ही बड़ा है। म्योर साहबने इसे मारनेका प्रयत्न किया। उनके हाथ ही नहीं चढ़ा। एक बार गोली चलानेका अवसर दिया, तो गोली ओछी पड़ी, और उसका अगला दाँत टूट गया।

मैं—'तो डोभालजी, बैठनेमें कौन-सा हर्ज है। भाग्य ही तो आज़माना है।'

डो०—'सो तो ठीक है। यह तस्कर मरे, तो बड़ा पुण्य हो।'

चारों ओर स्थान देखकर बैठनेकी जगह बनानेका निश्चय किया। लक्ष्मीदत्त और भूपालसिंह करौंदा काटने और खोदा-खादीमें लगे, और मुझसे कहा गया कि मैं कुछ आगे बढ़कर टहलूँ या बातें करूँ, जिससे बाघ यदि कहीं आस-पास हो; तो यह

समझे कि घसियारे घास काट रहे हैं। बाघ जंगलके सब जानवरोंसे चालाक होता है। शक्की वह परले सिरेका होता है। तनिक-सी असाधारण तथा कृत्रिम बातसे लाशपर नहीं आता। घसियारों और राहगीरोंकी गतिसे वह परिचित होता है। और जानता है कि सायंकाल होते ही वे लोग बातें करते और गाते हुए चले जाते हैं। इसलिए जंगलके उस भागमें, बाघको ठगनेके लिए, हम लोगोंने यह नाटक रचा था। बैठनेके स्थानसे दो फर्लाङ्गकी दूरीपर मैं तैनात था। एक घसियारेसे राज्यके कर्मचारियोंके विषयमें वार्तालाप करता रहा। पहले तो वह झिझका, पर मैंने तनिक यह संकेत कर दिया कि लोगोंसे दूध-दही तककी रिश्वत ली जाती है, यह बुरी बात है। यह सुनकर तो उसके हृदयका बाँध खुल गया। उसने बड़ों-बड़ोंकी कलई खोली, और तब मेरे पैर पकड़ लिये, और कहा—'महाराज, हम ग़रीब आदमी छँव हमारी कुई बात कै का पास नी बोलनी (महाराज, हम ग़रीब आदमी हैं। हमारी कुछ बात किसीसे न करना)।' मैंने उसे आश्वासन दिया कि किसीसे कुछ न कहूँगा। थोड़ी देर उपरान्त सीटी हुई और मैं बैठनेके स्थानपर लौट आया।

लाशसे पन्द्रह-बीस गज़ ऊपर खालेकी बग़लसे, जहाँसे बाघके आनेका मार्ग था, पहाड़की मिट्टी काटकर तीन आदमियोंके बैठनेकी जगह बनाई गई थी। आगेसे छै-सात लक्कड़ आड़े और तिरछे लगाकर और रस्सोंसे बाँधकर रोक करली थी, और चारों ओर, ऊपर तकसे, उसे कटीले करौंदोंसे आच्छादित कर दिया था। सामनेसे बहुत छोटे—इतने छोटे कि बन्दूक़की नाल निकल सके और लाश दिखाई पड़ सके।

तीन छेद थे। बाहर खाँस-खखारकर हम लोग भीतर बैठ गये। बाहरके आदमियोंने हमारा घुसनेका मार्ग करौंदोंकी झाड़ियों से रोक दिया। लोगोंसे कह दिया कि बातें और हल्ला करते हुए चले जाओ, जिससे बाघ यह समझे कि घसियारे चले गये। पाँच बज चुके होंगे, और हम लोगोंने भीतर बैठे हुए भोजन किया। मैंने अपने दोनों साथियोंको सिगरेट पीनेकी आज्ञा दे दी। मानवी चिमनियाँ धुआँ निकालकर स्वस्थ हो गईं। हम लोग शिकारके लिए सम्पूर्णतया तैयार थे। मैं बीच में बैठा। बन्दूकें छेदोंके सहारे रखी थीं।

दिन छिपा, रात आई। अँधेरेने जादूकी लकड़ी फेरकर सबको अन्धकारमें ढक लिया। हरिनों और पक्षियोंने प्रकृतिका अभिवादन करके अपने शयन-स्थानकी शरण ली। शान्तिके कारण भिलंगनाका जल-रव बढ़ गया। कृष्णपक्षकी अष्टमी थी। खालेमें और भी अधिक अन्धकार था। सिमटे-सुकड़े बैठे छेदोंसे लाशकी ओर देख लेते थे, और एक दूसरेको शरीर छूकर संकेतोंसे बता देते थे कि अभी बाघ नहीं आया है। मन-ही-मन मैंने कहा कि यदि आज बाघ मर जाय, तो एक रुपयेकी मिठाई बाँटूँ। मनुष्य अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिए अथवा आपत्ति-कालमें बड़ी-बड़ी शपथें खाता है। एकान्तमें, द्रवित होकर, आँसू बहाकर प्रायश्चित-प्रण करता है; पर समय बीत जाने पर उसके मनका पैण्डुलम फिर पुरानी गतिको प्राप्त होता है। मिठाई बाँटनेका निश्चय कर लिया। थोड़ी देरमें हड्डी टूटनेका कड़ाका हुआ। हम तीनोंने एक दूसरेको संकेतसे बता दिया कि बाघ आ गया। उस समय हृदयकी गति ही न्यारी

थी। भयसे नहीं, कौतूहल और उत्सुकतासे। बहुत दिनोंकी मुरादें पूरी हो आईं। बाघ तो आ गया। सावधानीसे देखा, तो लाशके समीप घुप अंधेरा था। छेदोंसे हम तो बाघकी झाईं देख सकते थे, पर वह हमें न देख सकता था। यदि यों ही फ़ायर कर दिया, तो न जाने लगे, या न लगे। डराकर भगानेसे तो यही अच्छा था कि वह अपनी इच्छासे चला जाय, और फिर कभी मारनेका अवसर दे, और कदाचित् चाँदनी छिटकने तक वह बना रहे। हम चाहते थे कि गोली ख़ाली न जाय। चाहे हममें से कोई घायल हो जाय, पर बाघ अवश्य मरे। अपमानका बड़ा भय था, इसलिए हम बैठे ही रहे, और बाघ हड्डी तोड़-तोड़कर मांस खाने लगा। हम लोगों ने उधर देखना ही बन्द कर दिया। जिसपर अपना चारा न हो, जो बीमारी लाइलाज हो, वह भाग्यपर ही छोड़नी पड़ती है। इस प्रतीक्षामें थे कि कब चन्द्रमा निकले और हमारी बन्दूकोंसे धाँय-धाँय हो। बन्ध्या स्त्रीको जैसे यह आशा होने लगे कि उसकी गोद शीघ्र ही भरेगी, वैसे ही आशामें हम बैठे थे। हम जानते थे कि हम अपने आनन्दके लिए, झूठी कीर्तिके लिए, गोरक्षाके बहानेसे, ईश्वरकी एक सृष्टि बाघ को मारने को उतारू थे, और, वह भी धोखा-धड़ीसे सामने ललकार कर नहीं। पर मनुष्य अपने अस्तित्वके लिए, अपनी भलाईके लिए, ये सब कुछ करता है, और धर्मशास्त्र एवं नीतिशास्त्र तकका सहारा लेता है। मनु महाराज तकने कह दिया है--

> गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम।
> आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन॥

अर्थात्--'गुरु हो चाहे बालक; वृद्ध हो चाहे अति विद्वान् ब्राह्मण, यदि वे आततायी हैं तो इनको बिना बिचारे ही मारडाले।'

फिर हम लोगोंके लिए तो अन्य भी कारण थे। मैं तो इतना उतावला हो रहा था कि मेरा बस चलता तो बाघके ऊपर कूद पड़ता। डौन क्युक्सौटे (Don Quixote) * की सी मनोवृत्ति प्राय: प्रत्येककी दो-चार क्षणके लिए हुआ करती है। ऐसे ही प्रलयंकारी विचारोंमें हड्डियोंकी चरड़-चरड़ बन्द हो गई। देखा, तो बाघ ही न था। क्या एसे कोई खटका हुआ था, अथवा किसी प्रकार हमारी उपस्थिति का उसे पता चल गया था। हम लोग हिले-डुले तक न थे। फिर ठीक चन्द्रमा के निकलने के समय ही वह क्यों चला गया? हम लोग बड़े खिजे। अपने पूर्व निर्णयको कोसने लगे। अन्धा-धुन्ध तीन फ़ायर कर देते, तो किसी-न-किसीका लग ही जाता। इस प्रकार उल्लू तो न बनते। मनुष्य पीछे पछताता है। मरणासन्न रोगी कोई खानेकी वस्तु माँगता है, तो उसके कुटुम्बीजन उसके हितके लिये वह चीज़ नहीं देते, पर संसार का हितैषी जब उसकी मानव-लीला समाप्त कर देता है, तब उसके कुटुम्बीजन अपनी मूर्खता, अपने पूर्व निर्णयपर पश्चात्ताप करते हैं। मनुष्य त्रिकालदर्शी थोड़े ही है? मन मारकर रह गये। चन्द्रमाका प्रकाश चारों ओर छा गया। लाश दिखाई पड़ती थी। गायकी चारों टाँगे आकाशकी ओर उठी हुई थीं

*स्पेन के सुप्रसिद्ध लेखक 'सरवैंटीस' के जगत्प्रसिद्ध उपन्यास 'डौन क्युक्सोटे' का मुख्य पात्र, जो भावुकता में आकर अतीतकी मृत संस्थाओं को स्थापित करना चाहता था।

उसका पिछला भाग बाघके पेटमें पहुँच चुका था। पर हम उत्साहहीन बैठे ही रहे। आधी रात तक तो तपस्याकी थी। शेष रातका जागरण कोई बात नहीं थी। दो बजे। हम उसी आसन पर डटे थे। शीत बढ़ा और तीन बजे सामनेसे एक पत्थर गिरा। हम चौकन्ने हुए। कोई जानवर—और शायद बाघ—था। पत्थर गिरा और कोई आहट न हुई। हम सतर्क होगये। आध घन्टे उपरान्त हमसे एक गज़की दूरी पर कुछ पत्थर सरके। हमें कुछ ऐसी आशंका हुई कि बाघ हमारे पास ही बैठा है, पर हम चुपचाप बैठे रहे। आध घण्टे तक निस्तब्धता रही, फिर 'कड़ाक' शब्द हुआ। हड्डी टूटी और बाघ के पेटमें कुछ और बोझा पड़ा। धीरेसे जो मैंने बाहरको देखा, तो विशाल दृश्य था। लाशपर अगले दो पंजे रखे हुए, पेट में मुँह गाड़-गाड़कर और मुँह भरे हुए, चारों ओर सिंहावलोकन करते हुए, सतर्कताकी मूर्ति, लम्बी पूँछ हिलाते हुए, रुक-रुककर वह अपने स्वाभाविक काममें लगा था। केमरा होता, तो रायफल-शिकार की अपेक्षा केमरा-शिकार करता। इतना साहसी जीव, जो एक थप्पड़ में गाय को मार सकता है, इतनी चालाकी और सतर्कतासे अपना भोजन करे! उसका ऐसा प्राकृतिक स्वभाव है। बिच्छू का डंक काट दो और उसको तनिक छेड़ो, तो उसकी बण्डी पूँछ भी वैसे ही वार करेगी, मानो उसमें डंक लगा हो।

ठीक पौने चार बजे दो फ़ायर हुए। लाशकी ओरसे कम्पोत्पादक दहाड़ हुई। गोली खाकर बाघ तड़पा। धमाका हुआ, फिर कुछ क्षणोंके लिए हम तीनों बुद्धिहीन हो गये। हाँफते हुये बाघने एक चपेटमें हमारी क़िलाबन्दी तोड़ दी। करौंदा और मोटे

लक्कड़ोंका हमारा आश्रय भाप-सा बनकर न जाने कहाँ उड़ गया। बाघके पंजेका एक हाथ और पड़ता, तो मैं स्वतन्त्रताके उस पुजारीपर आक्रमण करनेका फल पा जाता। अशकुन तो पहले ही हो चुका था, पर मैं तो मरने मारनेपर उतारू था। बन्दूककी नाल उसके पेटसे सटाकर बन्दूक दाग़ दी कमर टूट गई। पट्टसे बाघ गिरा और गुर्राता हुआ नीचे खिचड़ने लगा। जितना ही वह ऊपर आनेका जोर लगाता था, उतना ही नीचे जा रहा था। मेरुदण्डहीन जीव या संस्था ऊपर नहीं चढ़ सकती। खुशीके मारे हम आपेसे बाहर थे। दो-ढाई घंटा रात काटना बड़ा कठिन था। राम-राम कहकर रात काटी। वहाँ से उठे। भरी हुई बन्दूक लिये हुए सावधानीसे घिसटनकी ओर चले। आगे जाकर देखा, तो बाघ पड़ा था। पत्थर फेंककर यह निश्चय किया कि बाघ मर गया है। मैं आगे बढ़ा और देखा कि गो-भक्षक मरा पड़ा है।

शिमलासूसे सुपरिण्टैण्डेण्ट बग़ीचा मियाँ उमरुद्दीन और उनके लड़के अजीज़ आदि भागते हुए आये और हमें धन्यवाद दिया।

बाघ आठ फिट दो इंच लम्बा था। आदमियोंपर लदवा-कर हम लोग बड़ी शानसे टिहरीको आये। बाघको देखनेके लिए भीड़ लग गई। इतना बड़ा बाघ बहुत वर्षोंसे किसीने न मारा था स्वयं महाराज साहबने आश्चर्य किया। मैं और लक्ष्मीदत्त इस बातसे प्रसन्न थे कि नहूसत दूर हो गई, और खुदा-खुदा करके कुफ्र आखिर टूट ही गया।

भिड़न्त

सायंकालके चार बजे थे। स्कूल से लौटकर घरमें गरम-गरम चाय पी रहा था। छोटी लड़की अपनी भोली और शुद्ध दृष्टिसे, पास ही बैठी, खिलौनेसे खेल रही थी, और अपनी तोतली बोलीमें कह रही थी—'बाबूजी ! इछे भी चाय दे दो, थंद लग रही है।" मैं कुछ कहना ही चाहता था कि किसीने बाहर से पुकारा—'मास्टर साहब ! मास्टर साहब !! जरा बाहर आइये। एक आदमी आया है। बाघकी ख़बर लाया है।" बाघका नाम सुनकर मैं उछल पड़ा। चायका प्याला वहीं-का-वहीं रखकर झटसे बाहर आया।

देखा, तो बाहर पश्मीनेकी चादर ओढ़े मेरे शिकारी मित्र, पं० लक्ष्मीदत्त थपलियाल खड़े हैं, और उनकी बग़लमें एक हाड़का कंकाल—बूढ़ा—खड़ा है। उसकी मुखाकृति उसकी अन्तर्वेदनाकी द्योतक थी। कष्ट, बिपत्ति और समयके उलटफेर ने उसकी गति, तूफान में फँसे जहाजकी-सी, कर दी थी।

चिन्ताने कौतूहलका स्थान लिया, और बातचीतसे मालूम हुआ कि बाघने टिहरीसे कुछ दूर एक ही साथ दो गायोंका बध किया है।

एक तो दिन-भरकी थकावट, दूसरे कुसमय और तिसपर कड़ाकेका जाड़ा—तबीयत बाहर निकलनेको न करती थी, पर उस बूढ़ेकी आँखोंमें एक खिचाव था, जो हृत्तंत्रीके तारोंको अपनी ओर खींच रहा था। वह खिचाव प्रेमका आकर्षण-सा न था, वरन् कम्पायमान, भावी आशंकासे भयभीत बलि-पशु की आँखों से निकलती हुई मूक याचना का खिंचाव-सा था। उसकी आँखें कह रही थीं, यदि तुम हृदयहीन नहीं हो, तो हमारी रक्षा करो।

वन-बीहड़ सहचरी बन्दूक उठाई। कारतूस जेबमें डाले, और लदलीदत्तजी तथा बूढ़े किसानको साथ लेकर जंगलकी ओर चला। चला जाता था और मन-ही-मन सोचता जाता था कि संसारमें जीवन-संग्राम-समस्या बड़ी बिकट है। मनुष्य से लेकर कीड़े-मकोड़े तक उदर-पूर्तिके लिए एक दूसरेके खूनके प्यासे होते हैं। यदि कोई मनुष्य किसी पशुको मारता है, तो पापी कहाता है, पर जब बाज और बाघ चिड़िया और गायको मारते हैं, तब हम केवल यह कह कर ही चुप हो जाते हैं कि 'जीवो जीवस्य भोजनम्'। कल्पनाशक्ति अपनी उड़ानमें हिंसाके मूलतत्वके विश्लेषणकी ओर उड़ रही थी कि बूढ़ेने कन्धेपर हाथ रखकर कहा—'मालिक, ऊपर देखो। ठीक उस डाँडेपर मेरी बड़ी गाय मरी पड़ी है, और वहाँसे चार फर्लांगपर पहाड़की दूसरी ओर दूसरी गाय पड़ी है।"

बूढ़ेकी बात सुनकर दार्शनिक विचारोंने अपनी राह ली, और बाघ मारनेकी सूझी। लक्ष्मीदत्तजी और मुझमें चार-पाँच मिनटके लिए परामर्श हुआ। परामर्श क्या था, एक प्रकार की युद्ध-कानफ़रेंस सी थी, जिसमें अपने शत्रुकी सब चालोंका ख़याल किया गया।

बाघने दो गायें मारी थीं। परामर्शसे हम लोग इस नतीजे-पर नहीं आये थे कि एक ही बाघने दो गायोंको मारा है। सम्भव है, मारा हो। पहली गायको मारने के पश्चात् यदि किसी प्रकार वह वहाँ से भगा दिया गया होगा, तो उसने दूसरी गायको मार्गमें पाकर, पेटकी अग्नि शान्त करनेके लिए, उसको मार डाला हो? और यह भी सम्भव था कि दूसरी गायको किसी दूसरे बाघने मारा हो। मेरी राय यही थी, और लक्ष्मी-दत्तजीने मुझे जनरल मानकर मेरी ही बात ठीक समझी।

दो बाघोंकी आशंकासे हम लोगोंने अपने दलको दो भागों में विभक्त किया। लक्ष्मीदत्तजी तो दूसरी गायकी लाशकी ओर चले, जो शामके डाँडेपर मरी पड़ी हुई गायसे चार फ़र्लांग दूर गाँवकी ओर थी। मैं डाँडेकी ओर चला और यह निश्चय हुआ कि समय अधिक हो जानेपर लाशपर आज बैठना ठीक नहीं, क्योंकि बैठने के लिए स्थान दिनमें चार बजे तक बन जाना चाहिए था, जिससे बाघको किसी बातका शक न हो। स्मरण रहे, बाघ जंगलका कूटनीतिज्ञ चाणक्य है। छोटीसी हिलती पत्तीसे, आसन बदलने से और कोई-कोई तो कहते हैं कि पलककी आवाज तक़से बाघ अपने शत्रुको समझ लेता है और फिर लाश पर नहीं आता। इसलिए बाघको मारने

के लिये झाड़ी और काटोंसे जो स्थान बनाते हैं, वह दिनमें चार बजे तक बना लेते हैं, और बनाते समय कुछ आदमी इधर-उधर बैठे रहते हैं कि जिससे बाघ यह समझे कि किसान घास काट रहे हैं। जब शिकारी छिपकर बैठ जाते हैं, तब और लोग बातें करते चले जाते हैं, जिससे बाघ समझे कि घास काटनेवाले चले गये और उसका भोजन बेखटके पड़ा है। ऐसा होनेपर भी बाघ एकदम शिकारपर नहीं आता। छिप-छिपकर और रुक-रुककर चारों ओर देख देखकर एक-एक गज बढ़ता है।

लक्ष्मीदत्तजी बूढ़ेके साथ छोटी गायकी लाशकी ओर चले। हम दोनों को गाँवमें मिलना था।

मुझे एक मीलके लगभग पहाड़की चोटीपर पहुँचना था। और समय तंग हो रहा था। जंगलमें बाघ अपने शिकार पर चार-पाँच बजे ही आ जाता है, इसलिए मैं बड़ा चौकन्ना होकर चल रहा था। पहाड़की चोटीपर डूबते हुए सूरजकी लाल किरणें गज़ब ढा रहीं थीं। जीवन-ज्योति इसी प्रकार अन्तिम प्रकाश करके अनन्तमें लीन हो जाती है। दार्शनिक विचारोंको फिर रोका, और जीवन एवं मृत्यु—बाघके शिकार—का प्रश्न सम्मुख आ गया। रात्रि-आगमनके चिन्ह चारों ओर दृष्टि-गोचर हो रहे थे। चिड़ियाँ झाड़ियोंमें चहचहा रहीं थीं। किसान थके-माँदे घर को लौट रहे थे। मैं चढ़ाई पर एक-एक पैर सभालकर रख रहा था। कहीं चुपचाप बाघ दिखाई पड़ जाय और बाघ मुझे देख पाये, तो फिर एक बार जीवनकी बाज़ी लगाकर फ़ायर कर दिया जाय। बाघ और शिकारी जब घात लगाकर चलते हैं, तब उनकी आकृति देखने योग्य

होती है। मनुष्य तो मनुष्यकी श्रेणीसे—सद्भावनाओं और भावुकताके विचार-जगतसे—गिरकर पशु ही हो जाता है। स्नायु खिंचे हूए, पुट्ठे जकड़े हुए, खूनी आँखें चारों ओर देखती हुईं, कान चौकन्ने; संसारकी सब बातों—बाल-बच्चों, देश और राज-नीतिको भूलकर शिकारी एक विचित्र प्राणी हो जाता है। कड़ी चढ़ाईपर मैं इसी दशा में चला जाता था। कभी-कभी रुककर इधर-उधर देखता भी जाता था कि कहीं बाघके दर्शन हो जायँ तो मनोरथ सिद्ध हो जाय। आधी चढ़ाई चढ़नेके उपरान्त मैं एक चट्टानके किनारे रुका और गृद्ध-दृष्टिसे डाँडेकी चोटीकी ओर देखा। एक झाड़ीके आसपास चिड़ियाँ कुछ विचित्र-रूपसे चिड़-चिड़ा रही थीं। उधर जो देखा, तो हृदयकी धड़कन एकदम बढ़ गई। सामने तीन सौ गजपर झाड़ीके सहारे बाघ खड़ा हुआ दिग्दर्शन कर रहा था, और चिड़ियाँ अपनी शक्ति-भर उसपर विरोधका प्रदर्शन कर रही थीं—मानो टोड़ी बच्चा हाय-हायकी पुकार मचा रही थीं। मेरे पास रायफ़ल न थी—बन्दूक़ थी। रायफ़ल न लानेकी मूर्खतापर अपनेको हज़ार बार कोसा, क्योंकि बारह नम्बर बन्दूक़की मार इतनी दूर नहीं होती।

बाघ थोड़ी देर बाद अपने शिकारकी ओर शाही शान से चला। मैंने अपना मार्ग छोड़, कुछ चक्कर काटकर, पहाड़की चोटीपर पहुँचनेकी ठानी, जिससे कि बाघपर बग़लसे, छिपकर फ़ायर किया जा सके। बाघ मुझसे तीन सौ गज़ ऊपर था। वह पहाड़के ऊपरसे ही अपने शिकारकी ओर जा रहा था। मैंने आगे बढ़कर उसके रास्तेमें जाना चाहा।

दोनोंको एक ही स्थान पर पहुँचना था। जिस प्रकार दो गलियोंसे और भिन्न दिशाओंसे कोई चलकर गलियोंके चौराहे-

पर मिलते हैं और जब तक आमने-सामने नहीं आ जाते, तब तक एक दूसरेको नहीं देख सकते । ठीक उसी प्रकार मैं इस विचारसे मोड़की ओर चला कि कहीं पीछेसे पचास-साठ गज़पर बाघ दिखाई पड़ा और मौक़ा हुआ, तो उसे मारनेकी चेष्टा करूँगा। यह केवल अन्दाज़ ही अन्दाज़ था। यह स्वप्न में भी विचारा न था कि अन्दज़ा इतना ठीक निकलेगा । जूते उतारकर मैं ऊपरको लपका । जूते इस लिए उतार दिए कि तनिक भी आहट न हो। जब पहाड़की चोटीका मोड़ पचास-साठ गज़ रह गया, मैं धीरे-धीरे एक-एक पैर गिनकर बन्दूक़को बग़लमें दबाये और हाथ बन्दूक़के घोड़ेपर रखे हुए आगे बढ़ा। ख़याल था कि इतनी देरमें बाघ मोड़को पार कर गया होगा, और मैं मोड़पर पहुँचकर उसके मार्ग को काटकर छिपकर बैठ जाऊँगा, पर ज्यों ही मैं मोड़पर शिकारी आसनसे पहुँचा, त्यों ही दूसरी ओरसे बाघ आ गया। मैंने पहले बाघको देखा। जंगल में स्वतन्त्र-रूप से, अभिमान के साथ, मस्त चाल से चलते हुये मैंने बाघको इतने समीप से पहले कभी न देखा था झुकी हुई अधखुली आँखे, श्वेत दाँतों से कुछ बाहर निकली हुई लाल जीभ और गज़बके पुट्ठे—ऐसे पुट्ठे जो प्रत्येक युवकके होने चाहिए—साक्षात् यमराजकी मूर्ति मेरे सामने आ गई। हृदयकी धड़कन तो कुछ सैकिण्डोंके लिये न मालूम कितनी तीव्र हो गई। बाघसे मुझे सहसा भय नहीं लगता। पर इस आकस्मिक स्वागतके लिए मैं तैयार न था; पीछे हटने का समय न था। ऐसे अवसरोंपर मनुष्य बुद्धि से काम नहीं ले सकता। ऐसे अवसर उसे बुद्धि हीन कर देते हैं । सोचने का समय तो घर और सभा-समितियों में ही हुआ करता है।

ऐसे मौक़ेपर मनुष्य की सहायक पशु-बुद्धि (Instinct) ही होती है और प्रेरक कोई विशेष शक्ति। ज्यों ही बाघ की दृष्टि मुझपर पड़ी, त्यों ही वह गरजकर पिछले पाँव खड़ा हो गया अगले पंजों के नाख़ून निकाल कर पूँछ को इस प्रकार हिलाता हुआ जिस प्रकार बिल्ली चिड़िया की घात में बैठी हुई अपनी पूँछ हिलाती रहती है, मेरे सामने मुँह फाड़ कर खड़ा हो गया। बाघ मेरे इतने समीप था कि मैं बन्दूक़ की नाल से उसे छू सकता था। पहले तो मैं काँपा और यह मालूम होता था कि हृदय नीचे पैरों की ओर भीतर-ही-भीतर सरक रहा है। इसका कारण आकस्मिक मुटभेड़ थी। बादको निराश-जन्य साहस अथवा उद्वेगने मुझे मृत्युका सामना करने-योग्य ऐसे बना दिय, जैसे हरिन अपने बचावका कोई उपाय न पाकर दौड़ना छोड़कर, मारने पर उतारू हो जाता है। मैंने समझ लिया कि मैं फ़ायर करूँ अथवा न करूँ—बाघ मुझे मार ही देगा, और मेरे मरने की ख़बर स्त्री, बच्चों, घरवालों और इष्टमित्रों को मेरे शरीर की बची-खुची हड्डियाँ और मूक बन्दूक़ देगी, और इस जीवन का अन्त—जिसका आदर्श निरीह किसानों की सेवा करना बना रक्खा था—इस प्रकार अकेले पहाड़ और पत्थरों में, जो हज़ारों वर्ष से ऐसे ही कांड देखते हुए हृदय-हीन हो गये हैं, होगा।

उधर बाघ ने भी समझा कि यह दो पैर का प्राणी काली-काली लोहे की वस्तु लिए उसकी जान की ख़ातिर आया है। उसके ख़ूनका प्यासा है; उसके मुँहसे ग्रास छीने तो छीने पर उसकी जानका गाहक—दो पैरका जीव—इस प्रकार अपमान करके उसे मारने आया है। यह नहीं हो सकता। इस अपमान

और धृष्टताका एक ही उत्तर था, और वह यह कि वह अपने शत्रुकी सत्ता ही मिटा दे।

इधर मैंने ख़याल किया कि यदि फ़ायर किया, तो बाघ गिरते हुए भी एक चोट करेगा, और यदि वह मेरे खूनको न भी पी सकेगा, नीचे खड्डमें तो गिरा ही देगा। खड्डमें एक मील नीचे गिरनेपर मेरे अन्तका पता भी कोई न देगा, इसलिए घोड़ा चढ़ाये खड़ा था कि पहले मैं आक्रमण न करूँगा। यदि बाघ मुझपर झपटा तो फ़ायर करूँगा और आत्म-रक्षाके लिए जो कुछ बन पड़ेगा करूँगा। बन्दीगृहमें जब दाराका सिर काटनेके लिए औरंगज़ेब के भेजे हुए आदमी आये, तो दाराके पास शाक काटनेका चाकू था। दारा उसीसे लड़ा। तलवारके सामने उसकी कुछ न चली, पर दारा वीरकी भाँति लड़ता ही रहा। प्रत्येक व्यक्तिका यही कर्त्तव्य होना चाहिए। इस कर्म-विपाक-विमर्शके लिए न तो समय ही था और न उस समय दिमाग़ ही। इस घटनाको लिखने और पढ़नेमें देर लगती है, पर यह सब बातें एक मिनटमें हुईं। कम ही समय लगा होगा, अधिक नहीं।

एक मिनट तक हम दोनों डटे रहे। बाघ गुर्रा रहा था। उसकी आँखोंसे ज्वाला-सी निकल रही थी। मैंने फ़ायर न किया और न उसने आक्रमण। यह एक मिनट युगके समान था। अन्तमें बाघ एकदम मुड़कर भागा। ज्यों ही वह मुड़ा, मैंने समझा कि बस मेरे ऊपर आया। बन्दूक दाग़ ही तो दी। जंगल गूँज गया। गोली बाघके पेटमें लगी। मैंने बाघको गिरते देखा। बन्दूक छोड़ मैं नीचेको दौड़ा, पर गिरकर लुढ़कने लगा। जिस बातका डर था, वही हुआ। खड्डकी ओर मैं फुटबालकी भाँति

ढरकने लगा। चालीस-पचास गज़ लुढ़का हूँगा कि हृदय दहला-नेवाली बाघकी गरजन कानपर मालूम हुई।

मौतके अनेक बहाने होते हैं और जीवन-रक्षाके अनेक सहारे। यदि जीवन होता है, तो मनुष्य पहाड़की चोटीमें गिरकर बच जाता है, और मरनेके लिए सीढ़ियों से गिरना ही काफ़ी है। मुझे बचना था। भगवानको यही मंजूर था कि मैं बचा रहूँ। सामने खड्डकी ओर तेजीके साथ लुढ़कनेके मार्गमें एक चीड़का वृक्ष था। इतना होश-हवास तो था ही। आठ-दस गज़ ऊपर से पेड़ देख लिया। उसी ओर को जाने के लिए हाथ-पैर पीटे और उस पेड़ से आकर टकराया। पीछे से बाघ के घिसटने की सरसराहट हो रही थी। पेड़ से ठोकर खाकर रुका, झटपट ऊपर चढ़ा। इतने ही में विद्युत्गति से बाघ भी आगया और उचककर मुझपर पंजा मारा। उसके पंजेमें मेरा नैकर आया। नैकर फट गया और मैं ऊपर निकल गया। बाघकी कमर टूट गई थी, इसीलिए वह पेड़पर न चढ़ सका। पेड़पर ऊपर बैठकर मैंने दम लिया, और तब चोट और खूनकी ओर ध्यान गया। पेड़के नीचे बाघ पड़ा हुआ अन्तिम श्वास ले रहा था। मेरे मनमें विचारोंका सागर उमड़ पड़ा, पर उनके लिखने की आवश्यकता नहीं। रात्रिके नौ बजे तक जाड़े में उस पेड़ पर टँगा रहा। लक्ष्मीदत्तजीने आठ बजे तक प्रतीक्षा की, और वह भी इसलिए कि शिकारी और भिखारी का कुछ ठिकाना नहीं कि कहाँ जा निकले। छै बजे नहीं, तो सात बजे तक मुझे पहुँचना चाहिए था, इसलिए, चिन्तित होकर लालटेन और दो आदमियोंको लेकर वे मेरी खोजमें निकले और नौ बजे मुझे पेड़ पर टँगा और बाघको नीचे मरा हुआ पाया।

बड़ी कठिनतासे उतारा। बन्दूककी तलाश प्रातःकालपर छोड़ी गई। उस बूढ़ेने बाघके न मालूम कितनी लातें मारी और उसके बाप-दादोंको गालियोंसे पेट भरकर कोसा।

घर लौटकर थोड़ी बहुत सेंक-साक की। गुड़ के साथ दूध पिया। गृहणीने उस दिन ऐसी सेवा की, मानो मुझे बाघने घायल कर दिया हो। अगले दिन लक्ष्मीदत्तजी और मैंने दूसरे बाघको मारा। लक्ष्मीदत्तजीने विकट साहस दिखाया था—घायल होकर भी बाघको मार दिया।

मौतके मुँहमें

मेरे शिकारी मित्र पं० लक्ष्मीदत्त बड़े ही जिन्दादिल आदमी हैं। शिकारी में जो गुण चाहिए, वे सब उनमें हैं। संकटके समय, जब बाघ आक्रमण कर बैठे, साहसके साथ अपने साथीका साथ देना और शिकार-सम्बन्धी विषयके मूल-तत्वको समझकर काम करना और बीहड़ तथा अगम्य स्थानोंमें पीर; बावर्ची, भिश्ती, खर बनना—ये सब गुण लक्ष्मीदत्तजी में हैं।

उनमें और मुझमें एक भारी भेद है। उन्हें शिकार खेलने और खाने—दोनोंका शौक़ है। मैं शिकार खेलनेको कलाकी दृष्टिसे देखता हूँ। कट्टर निरामिषभोजी होनेके कारण मेरा शिकार खेलना गुनाह बेलज्जत है। अन्य व्यसनोंकी भांति शिकार भी एक व्यसन है; पर यह व्यसन अन्य व्यसनों की अपेक्षा कहीं अच्छा है। मेरी तो यह धारणा है कि विद्यार्थियोंके लिए—विशेषकर उनके लिए, जिनकी धमनियोंमें उष्ण रक्त प्रवाहित हो रहा है और जिनकी जीवन-यात्राका

मध्याह्न नहीं हुआ—शिकारखेलना—साहसके पुतले बनना—परमावश्क है। नवयुकोंको शस्त्र और शास्त्र दोनोंमें पारंगत होना चाहिए। 'उभयोरपि सामर्थ्यं शापादपि शरादपि' वाली बात होनी चाहिए।

× × ×

हाँ, तो बाघसे 'भिड़न्त' के उपरान्त अगले दिन प्रातःकाल लक्ष्मीदत्तजी आये। मेरी सूरत-शकल देखकर—यह निश्चय करके कि मेरे कहीं चोट नहीं है—उन्होंने दूसरे बाघकी बात छेड़ी।

मैंने कहा—भई, रहने भी दो। हम लोग कोई खुदाई फ़ौजदार तो हैं नहीं, जो ईश्वरकी सृष्टिमें हर जगह हस्तक्षेप करते फिरें। कल तो एक बाघ मारा ही है, जिसमें मैं ख़ुद भी शिकार हो गया होता। आख़िर ऐसी क्या लत!

लक्ष्मी०—हमारी लत क्या है? कहीं महीना दो महीनेमें तो बाहर निकलते हैं। आप तो किताबके कीड़े हैं। क्या बुराई है, जो अवकाशके समय एक दुष्ट आततायीको मारने चलते हैं? रही मारनेकी बात, सो हिंसा-अहिंसाकी बात तो मैं नहीं समझता। मैं तो बाघ मारकर मुर्ग़ी, हरिन और तीतरोंके मारने का पाप—यदि यह पाप है तो—कम किया करता हूँ। और फिर जो शत्रुको पाले, वह तो मूर्ख है; क्योंकि 'पयःपानं भुजंगनां केवलं विषवर्धनम्'।

मैं—ख़ैर लम्बी-चौड़ी बातें न बनाओ। स्पष्ट यह कहो कि आज भी शिकारको चलेंगे। शास्त्रकी बातें न करो। शास्त्रकी बातें तो शैतान भी कर सकता है।

लक्ष्मी०--चाहे कुछ सही। शैतान नहीं, शैतानका नगड़-दादा बनाइये, पर चलिए। आज इतवार है। कल फिर वही पढ़ानेकी घिस-घिस।

मैं--अच्छी बात है, पर आज तुम्हारी परीक्षा है। यदि बाघ मिला, तो तुम्हें ही पहला फ़ायर करना होगा। बहुत दिनों से तुमने कोई बाघ नहीं मारा। मुझे ही मारना पड़ता है।

लक्ष्मी०--अच्छी बात है। आज बाघ को इस लोकसे परलोक पठानेका पुण्य मैं ही करूँगा। आप सेनापति बने रहिये। तो मैं जाता हूँ। (जाते हुए)--हम लोग दो बजे जंगलकी ओर चलेंगे।

× × ×

भोजन किया और कुछ आराम करके हम लोग जंगलकी तरफ़ चल दिये। मेरी ढाई बरसकी लड़की 'कमला' रोने लगी, और कहने लगी--'बाबूजी, मैं भी साथ चलूँगी।" 'मैं बाघ मारने जाता हूँ बिटिया!"--मैंने कहा। 'मैं भी तो बाघ मारूँगी'--उसने सिसकते हुए कहा। यह सुनकर हम लोग सब हँसने लगे, पर उसकी समझमें कुछ न आया मचलती ही रही।

× × ×

एक मील तक हमारा मार्ग नदीके किनारे-किनारे था। भागीरथीकी सहायक—भिलंगना--धनुषाकारमें उछलती-कूदती, अपने सहवासी शैलशिखरों, द्रुमदलों अलिचुम्बित पुष्पों को अन्तिम प्रणाम और कदाचित् हमारा तिरस्कार करती हुई अपने प्यारेसे मिलनेके लिए दौड़ी जा रही थी। यों तो प्राकृतिक

दृश्य नयनाभिराम था । वनकी एक-एक वस्तु जीवनके लिए एक सबक़ था । पर, कितने हैं माईके लाल, जो साधारण घटनाओं से शिक्षा लें। केवल महान् आत्माएँ ही--जो ब्रह्मकी ज्योति अधिक परिणाममें लेकर आई हैं--बाज़के चिड़ियाको मारने और किसी शवके देखनेसे संसारमें युगान्तर कर देती हैं, और भगवान् 'बुद्ध' कहाती हैं।

फलोंका गिरना न्यूटनसे पहले किसने नहीं देखा था? पर, आकर्षण-शक्ति (Law of gravitation) का सिद्धांत उसीको सूझा। कितने हैं ऐसे, जो पीड़ितोंका चीत्कार सुनकर उनकी भलाई के लिए अपना जीवन होम दें ? विशेष आत्माओंपर ही विशेष प्रभाव होता है । शेष लोग तो दुर्वासनाओंकी पूर्तिके पातक-पुंज हैं ।

मानव-प्रकृति प्रति दिन एक ही वस्तु देखते-देखते ऊब जाती है। आगरेवालोंको ताजमहल देखने का कौतूहल नहीं होता। वृंदावन-वासियोंको 'कालिन्दी कूद कदम्बकी डारिन' में वह अकर्षण नहीं, जो एक नवागन्तुक यात्री को होता है। हम लोगोंको मार्गके दृश्यमें कोई विशेष आनन्द नहीं मिल रहा था वह तो रोज़की चीज़ थी। उससे हम अघा चुके थे। इसीलिए, समय बितानेके लिए मैंने लक्ष्मीदत्तजीसे किसी पहाड़ी गीतको पहाड़ी लोगों की टोनमें गानेके लिए आग्रह किया और घाटी शीघ्र ही "सड़ककी घूमा, सदा नी रहदी जवानी की धूमा" से गूँज गई। पहाड़ की चोटियोंपर गानेकी भी छूत होती है। एक आदमीने आवाज़ लगाई कि बस घास काटनेवाले—जिस प्रकार एक कुत्तेका भूँकना सुनकर और कुत्ते भूँकने लगते हैं— हू-हा करके गाने—रेंकने लगते हैं ।

ऐसी ही बातोंमें हम लोग गाँव के पास आगये। हमारे परिचित बूढ़ेने हमारा स्वागत किया। बूढ़ा और उसकी बुढ़िया दरिद्रता, दीनता और दुःखकी साक्षात् मूर्ति थे। ग़रीबीका चित्र-चित्रण करना साधारण लेखनीका काम नहीं। मेरी लेखनी में वह ओज कहाँ? उसमें इतनी शक्ति नहीं, जो उसका चित्र खींच सके। रूसके प्रसिद्ध लेखक इवान टुर्गनेवकी प्रतिभा चाहिए। उसके अभाव में ग्रमीणोंकी अधोगतिका वर्णन करना कठिन है।

बूढ़ा एक छोटीसी भग्नावशेष कुटियामें रहता है। कुटिया के सामने एक छोटासा बाड़ा है। उसीमें उनके पशु बँधते हैं। दो छोटे-छोटे बैल, दो गायें—जो बाघ द्वारा मारी गईं—और एक गाय का बच्चा, हल और थोड़ासा बीज—बस यही उसकी पूँजी है। बर्तनोंमें तवा, करछी, पतीली, थाली, तीन गिलास और दो लोटे हैं। कपड़ोंमें—बुढ़िया जो कुछ पहने है—एक जीर्ण-शीर्ण कुर्त्ता, एक पेवन्दार पहाड़ी धोती है और गहनोंमें नाकमें सौभाग्यका चिह्न पीतलकी नथ है। बूढ़ा एक लँगोट पहने और हाथमें हुक्का लिए—जिसको उसके दादाने देहरादून से मोल लिया था—हमारी खातिरमें लगा था कभी नमक लाता था और कभी दही। यदि आतिथ्यका तात्पर्य प्रेम, सहृदयता और जो कुछ अपने पास रूखा-सूखा हो, उसका खिलाना है, तो बूढ़ेका आतिथ्य उस षड्रस भोजनसे सौ गुना अच्छा था, जो कलह-कूप-अट्टालिकाओंमें बड़ी शानके साथ दिया जाता है। सत्कारके सात्विक भावसे बूढ़ेकी आँखें चमक रही थीं, और बाघके मरनेपर उसे जो प्रसन्नताहुई थी, वह कदाचित् क़ैसरके पतनसे लायड जार्जको भी न हुई हो। बूढ़ेके

सामने यदि प्रसिद्ध शिकारी सर सैम्युएल बेकर भी आ जाते, तो वह उनका भी इतना क़ायल न होता, जितना कि वह हमारा था। जनताके मनपर प्रत्यक्ष बातका जितना प्रभाव पड़ता है, उतना किसी दूरकी सुनी-सुनाई चीज़का नहीं!

× × ×

दही पीकर हम लोग जंगलकी ओर चले! साथमें बूढ़ा और सात-आठ आदमी थे। बाघकी भेंटको एक बकरा भी ले लिया था। लोगोंके हाथोंमें दातियाँ थीं। दो-एकने लट्ठ भी ले लिये थे। गाँवमें जंगलकी ओरको ढलवाँ उतार था, इसलिए, बटियापार हम लोग एकके पीछे एक होकर चले। एक स्थानपर पहुँचकर यह सोचाकि यदि बाघ आसपास आधे मील पर कहीं होगा, तो बकरेकी आवाज़ सुन कर अवश्य आयगा। बाघको जब बकरा बाँधकर मारना हो, तो बाँधनेका स्थान ऐसा होना चाहिए, जहाँसे आवाज़ दूर तक सुनाई पड़ सके। गहरे गढ़ेमें जहाँसे बकरेका मिमियाना पहाड़ की एक ही ओर तक सुनाई पड़ सके—बकरेको बाँधना ठीक नहीं। साथ ही स्थान चारों ओरसे आठ-आठ, दस-दस गज़ तक खुला होना चाहिए, जिससे बाघ आक्रमण करने से पहले ही, घात लगाते समय ही, मारा जा सके। प्राय: यह देखने में आया है कि लोग बकरेको झाड़ीके पास बाँध देते हैं, जहाँसे एक गज़ चारों ओर कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। फलस्वरूप बाघ बकरेको आकर दबोचकर— लेकर चम्पत होता है, और शिकारी साहब या तो काठके उल्लू की तरह बैठे रहते हैं या अन्धाधुन्ध फायर करते हैं और बाघके स्थानमें बकरेको ही गोली मार देते हैं। बकरेको इतनी

मज़बूतीसे तीन खूँटोंसे बाँधना चाहिए कि बाघके आक्रमणके धक्केसे रस्सी टूट न जाय। लक्ष्मीदत्तजीने बकरेको इसी भाँति खूब कड़ा बाँधा। बकरा बाँधनेसे पहले हम लोगोने अपने बैठनेका स्थान बना लिया था। हमारे बैठने का स्थान बकरेसे बीस-पच्चीस गज़ दूर ऊँचेपर था। ऊँचेपर, इसलिए जिससे बाघ, परमात्मा न करे, घायल होकर हम लोगोंपर धावा कर बैठे, तो समतल भूमिकी अपेक्षा चढ़ाईपर कठिनाईसे चढ़ सकेगा। हम दोनों पहले अपनी जगहपर चुपचाप बैठ गये, जिससे बकरेको यह न मालूम होने पाये कि उसके समीप कोइ आदमी है। ऐसा मालूम होनेसे बकरा उसी ओर देखता रहता है और मिमियाना बन्द कर देता है। उसे आदमीका सहारा हो जाता है। सहारेकी आशा मनुष्य और पशु दोनोंको होती है।

जब हम लोग बैठ गये, तब गाँववाले हो-हल्ला करते हुए चले गये, जिससे बाघको यह मालूम हो कि किसान लोग जंगलमें थे और सायंकालको नियमानुसार चले गये।

हम दोनों निर्जन स्थानमें चोरोंकी भाँति छिपे—घात लगाये—बाघकी जानके गाहक बैठे थे, और बेचारा बकरा नीचेकी ओर बीस-पच्चीस गज़की दूरीपर चिल्ला-चिल्लाकर आकाश-पाताल एक कर रहा था। उसे अपनी जानके लाले पड़े थे। बेचारेको इतनी समझ कहाँ कि उसका चिल्लना बाघका आह्वान करना था।

पूर्णिमा थी, इसलिए प्राची दिशासे, रात्रि होते ही, शशिदेव अपनी पूर्ण कान्तिसे बड़ी सजधजसे निकले। हमें उस

समय चन्द्रमाकी चन्द्रिकासे प्रेम न था। हम तो, 'काकचेष्टा वकध्यान'' से बाघ बाघ की टोहमें थे। बकरेकी में-में और में-में अनन्त रूप से जारी थी। हम लोग भी अपनेस्थानसे— जहाँ हमें कोई देख न सकता था—बाघ के आगमन की प्रतीक्षामें थे ७, ८, ९, बज गये। बाघको आना होता, तो सायंकाल होते ही आ जाता। ऐसे जंगलमें, जहाँपर सायंकालके समय कोई आदमी रहनेका साहस न कर सकता था, यदि बाघ होता, तो बकरेकी बोली पर जल्दो ही आता। यों तो सायकाल होते ही जंगलमें जंगली जानवरोंकी गतिसे एक—चहल-पहल थी पर इस चहलपहलसे हमें क्या मतलब? प्रतीक्षा करते-करते दस बजने आये, और लक्ष्मीदत्तजीको सिगरेट पीनेकी इच्छा हुई; पर मैंने संकेतसे उन्हें ऐसा न करने दिया, क्योंकि बाघको चौकन्ना करने और भगानेके लिए तनिकसा सन्देह ही पर्याप्त होता है। बाघका मारना क्या है, उसको ठगना है। जो वीरता और होश-हवास रखते हुए उसे धोका दे सकेगा, वही उसे मार सकेगा। रही मरने-जीने की बात, सो तो बाघके शिकारमें अपना शिकार कभी भी और कैसे भी हो सकता है।

साढ़े ग्यारह बजेके लगभग हमसे चार-पाँच फ़र्लांगकी दूरी काकड़ (Barking dear) बोला। काकड़ प्रयः भयभीत होकर या बाघको देखकर बोलता है। कदाचित् बाघ ही हो। इसलिए, हम अपनी बन्दूकें हाथमें लेकर बैठ गये। एकटक हो आँखे फाड़-फाड़कर देख रहे थे। एक बज गया ;पर बाघ न आया। इससे हम हतोत्साह न हुए। पुराने पापी थे। बाघके स्वभावसे भलीभाँति परिचित थे। हम जानते थे की अपने भोजन--

बकरे --पर बाघ जल्दी भी आ सकता है, और सोच समझकर, घंटोंमें, देरसे भी। इतनेमें हमसे पचास गजकी दूरीपर एक पत्थर लुढ़का, और फिर कोई आहट न हुई। उससे हमें विश्वास हुआ कि हो न हो बाघ ही है। दूरसे ही बैठकर उसने बकरेको देखा है और बहुत देर तक इसी आशंकामें था कि कहीं कोई खटका न हो। बकरेके साथ कहीं छली प्रपंची मनुष्य न हो। यह विश्वास करके कि कोई भय नहीं है, बाघ आगे बढ़ता प्रतीत हुआ। बकरेने बाघको देखकर मिमियाना बन्दकर दिया, और सुकड़कर पूँछ हिलाता हुआ कातर दृष्टिसे देखने लगा। सम्मुख मौतको नंगा नाचता देखकर बकरा बेबस --गुम-सुम होकर--काँपता हुआ खड़ा हो गया। अभी बाघ खुले मैदानमें न आया था--कम-से-कम हम लोगोंने उसे न देखा था, पर बकरेकी दृष्टि उसपर पड़ गई थी। थोड़ी देर उपरान्त जंगल के किनारे से दो चमकती हुई गोलियाँ-सी दिखाई दीं। वह चौंधियाँ देनेवाली भयावह ज्योति बाघकी आँखोंकी थी। अजगर और बाघकी आँखोंमें मोहकशक्ति होती है। वह शक्ति बकरेके और हमारे सामने थी। मैंने धीरे से लक्ष्मीदत्तजीको अपने हाथसे दबाया। उत्तर-स्वरूप उन्होंने भी वही संकेत किया। शिकार के समय बोलना और हिलना-डुलना मूर्खता है। शिकारके संकेत होते हैं। उन्हीं संकेतोंसे--वाणीके संकेतसे नहीं, वरन हाथ दबानेसे--हम तैयार हो गये। बाघने जब देखा कि झाड़ी से एक छलाँगमें वह बकरे तक नहीं पहुँच सकता, तब वह धीरे-धीरे बिल्ली की भाँति घात लगये हुए आगे बढ़ा और अपने स्नायु और पुट्ठोंको इकट्ठा करके वज्रकी भाँति हो बैठा। यह आसन घातक था और बकरेके जीवनके कुछ ही क्षण शेष

प्रतीत होते थे । पर नहीं । 'धाँय' की प्रलयंकारी ध्वनि हुई और लक्ष्मीदत्तजीने दुनाली बन्दूक़से एक दम दोनों घोड़े दाग़ दिये । बन्दूक़के शब्दका उत्तर, बाघने हृदय कँपानेवाली गर्जनसे दिया । बाघके गोली तो लगी थी, पर मर्म स्थान पर नहीं । पेटमें लगी । मैं अपनी रायफ़ल लिये बैठा था । मैं चाहता तो एक गोली बाघके खोपड़ेपर मार सकता था पर उस दिन का सेहरा तो लक्ष्मीदत्तजीके सिरपर था । चोट खाकर बाघ गरजा और छटपटाकर विद्युत्-गति से लपककर अन्दाज़से, हम लोगों की ओर बढ़ा । हमारे होश उड़ गये और समझ लिया कि बस हिंसाके पापोंका प्रायश्चित--सर्वँवैपूर्णँ ' स्वाहा'--हो गया । हाँफते हुए बाघको ऊपर तेज़ीसे चढ़ते देखकर मैंने रायफ़ल दाग़ दी; पर निशाना चूक गया । रत्रि का समय ! रायफ़ल का निशाना और तिसपर दौड़ते हुए बाघपर !! झट से ख़ाली कार-तूस निकाल फेंका और दूसरा कारतूस नालमें पहुँचाया ।

इतनेमें, लक्ष्मीदत्तजी अभी अपनी बन्दूक़के ख़ाली कारतूस निकालकर नए कारतूस लगाने ही पाये थे कि बाघने आकर अगले पंजे की थाप हमारी आड़पर मारी । सब झाड़, लकड़ी–हमारी सब क़िलेबन्दी--टूट गई । हम बाघके सम्मुख बैठे थे । मैंने एक फ़ायर और किया, और वह जल्दी में उसकी छातीमें लगनेके बजाय उसकी मेरी ओरवाली अगली टाँगमें तिरछा लगा जिससे उसकी वह टाँग बिल्कुल बेकार हो गई; पर उफ़ ! उसने दूसरे पंजेसे वज्र-प्रहार किया । उस समय का स्मरण करके मेरा कलेजा अब भी दहल जाता है । लेखनी मेरी उस समयकी मनोवृत्तिको व्यक्त नहीं कर सकती । उस अचूक क्रूर प्रहारसे लक्ष्मीदत्तजी लोटपोट होकर नीचेकी ओर निर्जीव

पत्थरकी भाँति लुढ़कने लगे। प्रहार के समय लक्ष्मीदत्तजीने केवल यही शब्द निकाले--"मास्टरजी, बुरी तरह मरा।" उनकी बन्दूक़ मेरी ओर आ गिरी। मेरा सिर चकरा गया। आँखोंके सामने अँधेरा छा गया। बाघके भयसे नहीं, अपनी मौतकी आशंकासे भी नहीं, वरन अपती वृद्धा माता के एक मात्र सहारे लक्ष्मीदत्तजीके लिए। उनकी पत्नी अपने···का समाचार सुनकर कैसे सिर धुनेगी! लक्ष्मीदत्तजीके घरमें तीन प्राणी थे। उनकी अट्ठाईस-तीस वर्षकी स्त्री, पाँच-छै महीने की एक बालिका और उनकी पैंसठ वर्षीया माता, जो लक्ष्मीदत्तजीकी केवल दो वर्षकी आयुमें विधवा हो गई थीं। ऐसे कुटुम्बपर यह विपत्ति-यह वज्रघात और उसका समाचार देने वाला मैं! यह मुझसे कैसे हो सकेगा? किस मुँह से मैं नगर को लौटूँगा? मैंने यह शर्त क्यों की थी कि आज पहले फ़ायर लक्ष्मीदत्तजीको करना पड़ेगा? नैतिक दायित्व तो मुझपर था। होने को तो वही होता है, जो भगवानकी इच्छा होती है; पर मुझको उसका साधन क्यों बनाया?

पता नहीं, बाघ लक्ष्मीदत्तजीको कहाँ खींच ले गया और उनके शरीरकी क्या दुर्गति की होगी—ये विचार आते ही मैं पागल-सा हो जाता था। अन्धाधुन्ध फायर करना निरर्थक था। कहीं लक्ष्मीदत्तजीमें जीवन शेष हो, तो मेरी बिना निशाने की गोलीके वे निशाना न बन जायँ। यदि उन्हें ढूँढा भी जाय तो कहाँ? पर प्रातःकाल तक प्रतीक्षा भी कैसे की जाय? अच्छा हो, मेरी जीवन-लीला भी समाप्त हो जाय। एक बृद्धा असहाय स्त्री का शाप और चीत्कार तो न सुनूँगा, एक युवती पत्नीका हृदय दहलानेवाला विलाप तो कानोंमें न पड़ेगा। उस उद्विग्नतामें

रायफ़ल वहीं पटकदी और दुनाली बन्दूक़—जिसे लक्ष्मीदत्तजी ने भरा था—उठाकर बाघ और लक्ष्मीदत्तजीके लुढ़कनेकी ओर उतरा। बन्दूक़की नाल खोलकर देखा, तो दोनों नालोंमें ग्राफ़ भरे हुए थे। कारतूसोंको नालोंमें फिर रख कर मैं नीचे की ओर चला। पन्द्रह-बीस गज़की उतराई उतर कर बकरेवाले मैदानमें आना ही चाहता था कि कोई लम्बीसी चीज़ पड़ी हुई जान पड़ी। ख़याल हुआ लक्ष्मीदत्तजी का शव होगा। पर नहीं, वह तो बाघ था।

मैंने समझा राक्षस बाघ लक्ष्मीदत्तजीका काम तमाम करके मरा है। मैं ऐसा सोच ही रहा था कि बाघ एक दम तड़पा, और यदि मैं बन्दूक़की नाल उसके मुँहमें डाल कर और दोनों नालोंसे फ़ायर करके उसका मस्तिक न उड़ा देता, तो वह एक ही चोट में मेरा भी काम तमाम कर देता। बाघ तो मर गया, पर मुझे तो लक्ष्मीदत्तजीकी खोज करनी थी। बकरे पर इतना क्रोध आ रहा था कि उसको भी ख़तम कर दूँ। किस मुहूर्तमें उसको लिया, जो ऐसी घटना हुई। खुली जगह के चारो ओर ढूँढा, पर लक्ष्मीदत्त न मिले। हार कर और उत्साहहीन होकर फिर ऊपर—बैठने की जगह—पर चढ़ा, और वहाँसे अन्दाज़ लगाकर नीचे उतरा और कुछ ही दूरपर लक्ष्मीदत्तजीको पड़ा पाया। देखकर पहले तो माथा ठनका। हृदय गति बढ़ गई। चित्त कहता था कि कहीं जीवित ही न हों। मनुष्य संदिग्धावस्थामें भँवरमें पड़ी हुई लकड़ीके समान होता है, जो कभी उछलती है और कभी डूबती।

साहस करके मैं उनके सिरके पास बैठ गया और हाथ उठाकर नाड़ी देखी। हैं! यह क्या। नाड़ी तो चल रही

थी। गति बहुत मन्द थी। मैंने आव गिना न ताव जेबमें से ब्राण्डीकी शीशी निकालकर लक्ष्मीदत्तजीका मुँह खोलकर गलेमें एक तोलेके लगभग ब्राण्डी उतार दी। मैं न तो मदिराका पियक्कड़ हूँ और न कभी उसे पीता ही हूँ, पर शिकारमें कुछ औषधियाँ साथ रखता हूँ और उनमें से एक ब्राण्डी भी है। ब्राण्डीके पेटमें जाते ही लक्ष्मीतत्तजीने झटसे आँखें खोल दीं और कराहने लगे। मैंने कहा—"तुमसे अधिक बुरी हालत मेरी रह चुकी है—घायल नहीं हुआ, पर मानसिक घायल रह चुका हूँ। कराहो मत। दियासलाई दो। आग जलाऊँ। जाड़ेके मारे हड्डियाँ तक गली जाती हैं। तुम्हारे घाव फिर देखूँगा। बाघ पास ही मरा पड़ा है।"

लक्ष्मी०—"ऐं! मरा पड़ा है!!"

मैं—"हाँ, मरा ही पड़ा है। अन्तमें उसे मेरी भी गोली खानी पड़ी।"

× × ×

आग जलाई और लक्ष्मीदत्तजीको वहाँपर बड़ी कठिनाईसे सहारा देकर लाया और उनकी चोटकी देख-भाल की। बातें करते-करते और पट्टी बाँधते-बूँधते प्रातःकाल हो गया।

जिस समय बाघ हमारे सम्मुख आ गया था और मैंने फ़ायर किया था, लक्ष्मीदत्तजीने फ़ायर करनेका अवसर न पाकर अपनी खुखरीका वार बाघकी छातीपर किया था। मैंने भी उसी समय फ़ायर किया था और लक्ष्मीदत्तजीके वारके कारण ही मेरी गोली ठीक निशानेपर नहीं बैठी थी। फिर बाघने एक

थाप लक्ष्मीदत्तजीके मारी। पंजेका पूरा आघात उनकी बन्दूक पर पड़ा था, इसलिए बन्दूक मेरे आगे आ गिरी थी। बाघके पंजेके केवल दो नख उनकी भुजापर पड़े थे, वह कमीज़, स्वेटर-कोट, कोट और चेस्टर पहने हुए थे, पर फिर भी बाघके नख कपड़ोंको पार कर गये और उनकी बाँहके पुट्ठोंको कपड़ोंके आवरणसे बाहर निकाल दिया। इस झटकेके मारे लक्ष्मीदत्तजी ऐसे दूर जा गिरे, जैसे कोई खिलाड़ी गेंदको उठाकर फेंक देता है। लक्ष्मीदत्तजीने समझा कि बस अन्त आ गया। उन्हें फेंक-कर बाघ फिर उनके पास गया और उनकी गर्दन पकड़कर भँभोड़ना चाहता था कि लक्ष्मीदत्तजीने अपनी बची-खुची शक्ति को एकत्र करके—एक अन्तिम वार अपनी खुखरीसे किया। बाघ चोट खाकर उछला, गिरा और बेहोश हो गया। उधर लक्ष्मीदत्तजी भी अचेत हो गये।

लक्ष्मीदत्तजीके खुरसटें बहुत थी। उनकी एक उँगली भी उतर गई थी। आँख और चेहरेपर ऐसे चिह्न हो गये थे, मानो किसीने हंटर मारे हो।

बाँहके घावकी बड़ी चिन्ता थी। बाघके नखकी चोटसे घाव विषैला (Septic) हो जाता है। हम लोगोंने टिहरी आकर किसीसे यह न कहा कि बाघने लक्ष्मीदत्तजीको घायल किया है। वृद्धा माताके प्रेमजन्य कोपका भाजन कौन बनता? यही कह दिया कि गिरकर चोट आई है और पत्थर चुभ गया है। वृद्धा माता आँखोंसे लाचार हैं, इसलिए उनपर चाल चल गई और टिहरीवालोंको—अपने घनिष्ट मित्रों तकको भी—लक्ष्मी-दत्तजीकी रोमांचकारी घटना और हम लोगोंके मौतके मुँहमेंसे

जीवित निकल आनेकी बात आज तक नहीं मालूम है। शहरमें तो बस यही ख़बर हुई 'मास्टर साहबने एक और बाघ मारा है', पर मास्टर साहबके व्यथित हृदयको ये लोग क्या समझें कि उनपर बाघके मारनेके समय क्या बीती थी।

लक्ष्मीदत्तजीने दस-बारह दिनकी छुट्टी ली और धीरे-धीरे वे अच्छे हो गये और शीघ्र ही अपने उदरको जंगली मुर्ग़, चकोर और तीतरकी क़ब्र बनाने लगे।

मैंने परब्रह्मको कोटिशः धन्यवाद दिया और अपने भाग्यको सराहा कि उस दिन मेरे साथीकी जान बच गई। मुझे अपना ख़याल न था। यों मरने-जीनेको तो—

"एक जाता है तो आता है जहाँमें दूसरा।
उसकी महफ़िलका कभी ख़ाली मकाँ होता नहीं॥"

ख़ूनी घटवारा

शराबीका स्वर्ग शराब, साक़ी और सनमके साथ है और मेरा आनन्द वेदान्त, साहित्य और शिकारमें है। जब दुनियाँकी कठोरता से, लोगोंकी धोकेबाज़ी और गृह-चिंता-चितासे चित जलने लगता है, तो आबादीसे वहशत आती है, जंगलका स्मरण हो आता है और पागलकी भाँति उसी ओरको भाग जानेको जी चाहता है।

मनकी ऐसी ही परिस्थितिमें, कल्पना-पर्वतके उच्चतम शिखरपर जब भावनाएँ सुकुमार विचारोंका एक ताना-बाना पुर रही थीं और जब आशा और निराशा वायुके झकोरे उन विचारोंको हिला-सा रहे थे, तब मनका पैंडुलम जगत-जन्य ग्लानिकी ओर बढ़ा, और वे सुकुमार विचार ऐसे विलीन होगये, जैसे नदीमें बहता हुआ घड़ा पत्थरकी चोटसे टूटकर डूब गया हो।

चोट-सी खाकर मैं तिलमिला गया; लम्बी साँस लेकर उठा और सिर नीचा किये हुए थोड़ी देर इधर-उधर कुटियाके

सामने टहलता रहा, और इस नतीजेपर आया कि पहले तो यमुना-तटपर चलकर नाकेका शिकार खेलना चाहिए। ऐसा निश्चय करके मैंने गोपालसिंहको बुलाया।

गोपालसिंहका मुझपर बहुत स्नेह है, और हिरनोंके शिकार में गोपालसिंहका नब्बे प्रति सैकड़ा मेरा साथ रहा है। गोपाल सिंह को साथ लेनेका एक दूसरा कारण और था। गोपालसिंह-की ससुराल यमुनाके किनारे है, और इसलिए, ठहरने की सुविधा थी। खाल निकालनेके लिए गोविन्दा चमारको साथ ले लिया।

× × ×

राम, गोपाल, गोविन्द—तीनों गोपलसिंहकी ससुरालके निकट पहुँचे, और गोपालसिंहने बातों-ही-बातों में कहा—'पंडितजी, आपको मैंने कभी ससुराल जाते न देखा और न सुना। अबकी तो अपने साथ मुझे लिवा ले चलिये।'

मैं (कुछ झेंपकर)—"अब अपनी ससुरालकी बातें करते हो, या मेरीकी? तुम जाना चाहो, चिट्ठी लिख दुंगा चले जाना। खातिर ख़ूब होगी।"

गो०—"ख़ातिरको क्या मैं भूका हूँ; पर आपके साथ अवश्य चलूँगा।"

मैं (कुछ झुँझलाकर)—"क्या फ़जूलकी बातें करते हो। शिकारकी बातें करो। जब मैं चलूँ, तब चले चलना। हाँ, तो वह मगर घाटसे किधर रहता है?"

गो०—"उसका कोई स्थानविशेष नहीं है; पर है वह बहुत लागू।"

मैं—"अच्छी बात है। आज सायंकालको चलकर मौक़ा देखेंगे।"

× × ×

सायंकालके लगभग पाँच बजे हम लोग यमुना-तट स्थित एक टीलेपर जा बैठे। यमुना धनुषाकारमें बह रही थी। न उसमें कलरव था और न लहरें। शोरगुल और जोश तो युवा-वस्थाका सूचक होता है—शक्ति—संचित शक्तिका द्योतक है। युक्तप्रान्तके इस भागसे यमुनाकी अधेड़ अवस्था प्रारम्भ होजाती है। यमुना मानो अपनी पुरानी स्मृतियों और व्रज-विरहका स्मरणकर, कुछ सोचती हुई; गुम-सुम चली जा रही थी। वायुके झोंके आकर उसे गुदगुदाते थे, आलिंगन करते थे पर वह मानो खीजकर कहती थी—'अरे हटो, अठखेलियाँ न करो, किसी दूसरे से उलझो।' किनारेके टंटीके वृक्षसे टेंटीका लाल फूल, अपने गर्वमें, यमुनाकी ओर तिरछी नजरसे देखता था। कलियाँ सुषुप्तावस्थामें पड़ी मालूम होती थीं। ओस उनकी जवानीकी आँखें धोकर खोलनेके लिए आ चुकी थी। हमसे कुछ दूर पूर्वकी ओर घाट था, और वहाँपर तीस-चालीस आदमी खड़े हो-हल्ला करते हुए, लकड़ियों लाठियों और जो कुछ जिसके हाथमें पड़ सका, उससे यमुना मथते हुए पार हो गये।

× × ×

मैं, रायफ़ल भरे, घाट और मार्गसे दूर, एक रेतियाके सामने, ओटमें बैठा था। प्रातःकालके नौ-दस बजे होंगे। यमुना वहाँ बीहड़की धरातलसे समकोण-सा बनाती थी; और, इसलिए, वहाँ दो-चार गहरे दह थे, जहाँ पानी प्रत्येक ऋतुमें

स्थिर-सा रहता था। नदीकी दूसरी ओरको बालुकामय ढलवाँ रेतिया थी। बीहड़से निकलकर नीलगाय, हिरन और सूअर वहाँ आकर पानी पी जाया करते थे। उस स्थानके आमने-सामने न तो कोई गाँव था, और न वहाँ कोई मार्ग। नदी-किनारेका मार्ग भी, जिधर मैं बैठा था, ऊपर टीलोंपर होकर था। उस शान्त जलाशयको देखकर यह मालूम होता था, मानो प्रकृतिने अपने कोमल करोंसे यह दह बनाया हो। वहाँकी जल-राशि शान्ति-स्वरूप थी; पर मेरी गृद्धदृष्टि उसी वाह्य पवित्र गम्भीर जलाशयकी ओर थी। थोड़ी देरमें—ज्यों ही सूर्यकी किरणोंका प्रकाश छनकर नीचे पहुँचा होगा—उस दहमें लकड़ीका एक टुकड़ा-सा दिखाई पड़ा, जो दो जगह पास ही पास उठा-सा था। वह टुकड़ा चार-पाँच इंच लम्बा था। धीरे-धीरे चार-पाँच वैसे ही टुकड़े पानीपर तैरने लगे, और फिर तो वे तुच्छ टुकड़े सुरसाकी भाँति बढ़ने लगे, और कई एक तो पेड़की पींड़-से प्रतीत होने लगे। एक-एक करके सब—एकको छोड़कर—बड़े मिजाजके साथ पानीको चीरते हुए—मानो कोई रस्सा खींच रहा हो—रेतियाके ऊपर चढ़े, और चढ़कर, दो-एक मुड़कर, पानीकी ओर मुँह करके, धूप सेकनेको पड़ रहे, पर एक मगर पानीमें पलराता रहा। न तो वह डुबकीही मारता था, न किनारेपर आता था और न आगे-पीछे ही हिलता डुलता था। अचल था। दूरबीन लगाकर देखा, तो उसकी गोल-गोल रक्तवर्ण, घृणोत्पादक आखें बीहड़ की ओर लगी हुई थीं। उसकी थूथड़ीसे मालूम हुआ कि वह छिपकलीके मुँहवाला चपटी थूथड़ीवाला (Snub nosed) मनुष्य और पशुओंको खानेवाला मगर है।

एक घंटे तक वह उसी आसनपर जमा रहा। दाँव-पेचका जानकार था। बुरे-भले भोजनसे बुद्धि और समझ घटती और बढ़ती है। मनुष्यका मीठा मांस मुँहसे लग गया होगा—फिर भला चालाकी क्यों न आवे? सात्विकी, राजसी और तामसी प्रकृति, अनेक अंशोंमें, भोजनपर भी तो अवलम्बित है। यदि वह अपने क़िले—पानी—से अपने भावी शत्रुओंकी अथवा भोजनकी तलाशमें कोई ऊँच-नीच काम करे, तो क्या हानि। कम-से-कम वह अपनी जातिका खयाल रखता था। बुद्धिके पुतले ब्रह्मके निकटतम प्राणी इस दो पैरके शशुकी भाँति तो वह अपने काले कारनामोंपर बाइबिल, कुरान और वेदकी छाप तो नहीं लगाता था। उसकी तो अहर्निश रट यह थी कि भूककी व्याकुलतामें कोई रुचिकर जीव उसकी दाढ़ोंके नीचे आये। मनुष्यकी भाँति एकत्र करना उसे न आता था। कट्टर कम्युनिस्ट (समष्टिवादी) था। परिश्रम करके, दाव-घात लगाकर, अपनी जानको हथेलीपर रखकर, घंटों प्रतीक्षा करके और दिनों भूके रहकर, उसे अपना भोजन मिलता था। लोग उससे डरे हुए थे। उनका डर युक्ति-युक्त था। मनुष्य मनुष्यकी जानका गाहक हो जाता है; पर वह खूनी घड़ियाल किसी अन्य घड़ियाल और नाकेका शत्रु न था। हाँ, और मगर उसको तरह देते थे, और वह भी उनका तिरस्कार-सा करता था। उसका ऐसा करना ठीक भी था, क्योंकि और नाके तो मनुष्यको आदर और भय की दृष्टिसे देखते थे और वह रक्त-पिपासित दृष्टिसे।

मैं अपने आसनपर जमा बैठा था, और वह अपने जल-दुर्गसे चारों ओरका विहंगावलोक कर रहा था। मैं वहाँ दो घंटे तक जमा रहा; पर वह पानीसे बाहर न निकला।

मेरी आँखें तिलमिलाने लगीं, और नाकोंकी पीठ सूखकर भुरभुरी-सी हो चुकी थी; पर वह अपनी ड्यूटीपर डटा था। कभी-कभी तबियत करती थी कि उसका खयाल न करके किनारेपर पड़े नाकोंमें से एकपर गोली चला दूँ। किनारोंपर पड़े नाकोंमें भी छपकलीकी थूथड़ीवाले दो छोटे नाके थे। दूरबीन लगाकर मैंने उन्हें फिर देखा। मजेसे मानो समाधिस्थ पड़े थे। एक उनमें लम्बी थूथीड़वाला (Long nosed) मुँह फाड़े पड़ा था। सूटकेसों और अटैचीकेसोंके लिए लम्बी थूथड़ीवाले नाकोंकी ही खाल अच्छी होती है; । पर मैं अपने स्वार्थमें, नामके लिए, जमा बैठा था कि खूनी घड़ियाल को मारूँ।

कुछ दिनोंसे घड़ियालने मार नहीं की थी, इसलिए, मैं भी अपने भाग्यकी परीक्षाके लिए बैठा था; पर यह पता न था कि वह पानीसे न निकलनेवाला--वही खूनी घड़ियाल है, जिसके मारे घाट पर से एक-दो आदमी अकेला निकलनेका साहस न करता था। अन्तमें, थककर, अच्छे शिकारीके सिद्धान्तोंकी पर्वा न कर, सन्तोष और लगनको छोड़कर, किसी दूसरे मगर पर फ़ायर करने का विचार किया। कदाचित् वह घड़ियाल भूका है, और जब तक वह अपना पेट न भर लेगा, तब तक वह किनारे पर न निकलेगा। आराम और आनन्द तो क्षुधा-निवृत्ति के उपरान्त ही सूझते हैं। भूके भगति नहीं होती। वह घड़ियाल भी शायद भूका था इसलिए ताकमें था। घाट सुनसान था। दो-चार आदमी निकलें, तो वह भुगत ले; पर बीस-पचीसकी टोली--और वह भी कुहराम मचाते निकलती हुई टोली—में से किसी को पकड़ने का उसका

सहसा साहस न होता था। छोटे बालक और बूढ़े हृष्टपुष्ट आदमियोंके बीचमें होकर चलते थे, इसलिए, उसे भय हो जाता था कि अक़लका पुतला आदमी; जानपर खेलकर, न-जाने क्या कर बैठे, और फिर वह एक बातसे बहुत घबड़ाता था--उसका उसे काफ़ी अनुभव था--भुक्तभोगी था—कि लोहे कि नालमें से फेस्स और दन्न करके सीसेका टुकड़ा कहीं उसके न आ लगे। एक बार उसकी पीठपर ऐसे ही एक चोट लगी और धाँयसे शब्द हुआ, और चारों दिशाएँ कम्पित हो गईं। उसकी पीड़ाके मारे वह हफ्तों तक बेचैन रहा। एक दूसरी बार एक चमारिन का आहार करके वह एकान्तमें जाकर धूपलेनेको पड़ा था कि धड़ाम से उसकी पूँछ और पिछले पाँवके बीच कैसी चोट लगी, और अररधमकी ध्वनि हुई। गोली खाकर वह तड़पा और पूँछ और थूथड़ी एकत्र-सा करता हुआ कला-मुंडा खाकर उसने जमुना मैयाकी शरण ली। उफ़! घाव में मृत्यु-वेदना हो रही थी, और खूनका पनाला-सा चल रहा था। खूनकी गन्धसे मछलियाँ और कछुए, जो उसके भयसे दूरसे ही भागते थे, उसके पास आगये, और मछलियोंने घाव में नोचना प्रारम्भ कर दिया। एक तो आफत थी ही, तिस पर वे तुच्छ मछलियाँ भी उसको अपमानित करने लगीं। पीड़ासे मूर्छा-सी आ रही थी; और वह अपने युद्ध-क्षेत्रकी एक खाई—नदीके भीतर बगलवाली खोह—में लेटना चाहता था कि कुछुओं और मछलियोंके झुण्डने, चक्कर काट-कूट कर, उसके घावमें से माँस के टुकड़े तोड़ने प्रारम्भ कर दिये। परेशानी थी। उसकी शक्ति-को 'चैलेंज' किया था; पर हिलने-डुलनेकी किसमें शक्ति थी मुड़कर मुँह मारता तो हिलनेसे पीड़ा बढ़ती थी; पर उनसे

कैसे पिंड छुड़ाता । आख़िर दिक़ होकर निकला । कछुए और मछलियाँ भी साथ थीं, और घावमें से कुछ-न-कुछ ले ही जाती थीं । धार की ओर पड़ कर उसने अपनी स्टीम तेज़ की । कछुए तो पीछे रह गये, पर मछलियाँ तो पानी में सरपट तैर सकती हैं । उनसे पीछा छुड़ाना कठिन था । अन्त में उसे बाहर किनारे पर आना पड़ा । वहाँ मछलियों की एक न चली । हाँ एक कछुआ आया । उस पर उसने कटसे अपने दाँतों के दोनों आरे चला दिये । कछुआ घायल होकर लौट गया । और इस प्रकार मगरने राम-राम करके उससे अपनी जान बचाई । अरिष्ट नहीं, मारकेश था ; पर बच गया । पर, वह अपने इन कटु अनुभवों को भूलता न था, और जहाँ तक उससे बन पड़ता, वह पानी से बाहर न निकलता, और निकलनेपर—क्योंकि धूपमे लेटना नाकोंके लिये, कुछ आवश्यक है—बड़ा सतर्क रहता । कोई भी, कैसा ही, आदमी उसको दिखाई पड़े, या उसे आदमी की शंका हो जाय; तो वह शीघ्र ही पानीमें सरक जाता था ।

इसलिए, वह पानीसे निकलने वाला न था। बैठे-बैठे मैं थक गया । नाकों का शिकार नीरस होता है । गोली खाकर या तो आप वहीं धरे रह जाँयगे, या फच्च करके पानी में सरक जाँयगे और फिर हाथ आने वाले नहीं, इसलिए, मैंने घड़ी जेबसे निकाल ली कि यदि आध घंटेमें वह बाहर निकला तो ठीक है, नहीं तो मैं और नाकों पर फायर करूँगा; पर अभी दस मिनट भी न होने पाये थे कि उसने डुबकी लगाई । हैं यह क्या ! क्या उसने मुझे देख लिया है ? ऐसा तो नहीं हो सकता । फिर क्या कोई आदमी इधर-उधर से आ रहा है, जिसके डरसे वह डुबकी

लगा गया ; क्योंकि उसे तो मनुष्य केवल खाने में ही अच्छा लगता था।

दूरबीन लगाकर सामने बहावकी ओर देखा, तो कोई नजर न आया। फिर क्या कोई अभागा अजनबी आदमी यमुना में पानी पीने को आया है, या स्नान कर रहा है ? नदी के ऊपर जो नजर डाली, तो माथा ठनक गया। एक आदमी और एक स्त्री घाट पार कर रहे थे। आदमी आगे-आगे था और स्त्री पीछे लहँगा ऊँचा किये सँभल-सँभलकर चल रही थी। छींटके लहँगे और चुनरीसे भान हुआ कि कोई ग्रामीण विदा कराके लौटा है। होगा कहीं दूर का और उसे घाटपर के खतरे का कुछ ज्ञान न होगा; नहीं तो इस प्रकार अकेला न निकलता, अथवा जान-बूझकर भी ग्रामीण मनोविज्ञान के भ्रम में होगा कि घड़ियाल प्रतिदिन थोड़े ही मार करता है या जिसकी मौत आ गई है, वही पकड़ा जायगा, नहीं तो इस आदमी अमुक दिन निकले और सातवेंको ही क्यों पकड़ गया ?

अपने ठौरसे उठकर मैं घाटकी ओरको भागा। भागत जाता था और चिल्ला-चिल्लाकर उन दो अभागे व्यक्तियोंके सम्बोधन करता जाता था कि नदीसे जल्दी निकलो, नहीं तो खूनी घड़ियाल किसीको पकड़ लेगा। मेरे दो-चार बार चिल्लाने तक आदमी तो किनारेपर पहुँच चुका था, और स्त्री सूखेमें पैर रखनेसे पूर्व उन्हें धो रही थी। मेरी चेतावनीक उन्होंने कुछ खयाल न किया। आदमीने खयाल किया कि मैं किसी औरसे कह रहा हूँ। स्त्री पैर धोकर अपनी जूतिय पहननेको झुकी ही थी कि एकदम उसके मुँहसे चीख निकल

और लड़खड़ाकर वह पानीकी ओर खिंची, और केवल यही कह पाई—"हाय मोय (मुझे) बचैयो !" और पानी में बिला गई !

इस आकस्मिक वज्रपातसे वह आदमी हक्का-बक्का रह गया। यद्यपि स्त्रीके मरनेके उपरान्त भारतवर्षमें दूसरे विवाहके लिए कोई विशेष कठिनाई नहीं पड़ती; पर जो अपना दिल दे चुकते हैं, वे फिर लौटा नहीं सकते। उनमें तो एकके लिए ही स्थान होता है। उस आदमीकी भी कुछ ऐसी गति थी। जब मैं उसके पास पहुँचा, तो वह और रोने लगा। समवेदनासे हृदयमें ज्वार-भाटा-सा आता है, और आदमीका दु:ख तरल होकर आँखोंके मार्गसे निकल जाता है। समझा-बुझाकर मैं चला गया।

× × ×

इस घटनाके ठीक सात दिन पश्चात् एक उचित स्थानपर, घात लगाये, मैं छिपा बैठा था। टोपके सहारे रायफल भरी रखी थी। छै कारतूस उसमें पड़े थे दूरबीन बग़लमें रखी थी, और जमुनाका दूसरा किनारा मुझसे सौ गज़ दूर था। उस पार नदी-तटसे चार-पाँच गज़ दूर एक बच्चेवाली बकरी बँधी थी। उसका बच्चा उसके पास न था, इसलिए, वह उसकी ममतामें मिमिया रही थी। पिछले सात दिनोंमें, एक मीलकी दूरीमें, किसीने न तो जमुना पार की, और न कोई जानवर पिलाया, और जंगली जानवरोंको पानी पीनेसे रोकनेके लिए कई रखवाले नियत कर दिये गये थे। बकरी बाँधना एक नवीन प्रयोग था। एक ख़याल था। जिसकी सफलताके बारेमें कुछ कहा नहीं जा सकता था। एक धुन थी, जिसमें मैं लग गया।

बकरीने मुक-मुक; मैं-मैं करना प्रारम्भ कर दिया, और मेरी नज़र जमुनाके जलके धरातलपर थी। एक घंटेकी बैठकके बाद मैं चौकन्ना हुआ। मेरी बाईं ओर डेढ़ सौ गज़की दूरीपर एक तख्तेका टुकड़ा-सा पलराया, और फिर उसमें से एक सिरा ही ऊपर रहा। शेष डूब-सा गया। दूरबीन लगाकर देखा; तो उस टुकड़ेकी आँखें बकरीकी ओर थीं। हो न हो, यह वही खूनी घटवारा है—ऐसा खयाल करके मैंने रायफ़ल उठा ली, और लगा करने उसकी प्रतीक्षा।

धीरे-धीरे नपी-तुली गतिसे वह तख्ता, नदीकी धारमें, बकरीकी ओर बढ़ा, और कुछ आगे जाकर रुका। दूरबीन लगाकर मैंने उसकी आँखोंकी ओर फिर देखा। उन खूनी आँखोंसे कपट चू रहा था। वे आँखें बकरीकी ओर लगी हुई थीं। वह इस प्रतीक्षामें था कि बकरी अपनी प्यास बुझाने आवे—अपने सूखे ओठोंको जमुना-जलसे तर करनेका साहस करे—प्यासकी आतुरतामें अपनी टाँगें घुटनोंसे मोड़कर पानी-पर घुटनावे, फिर तो वह भुगत लेगा; पर अभागी बकरी पानी पीने आती ही न थी। अपना बिरहा गा रही थी। दो घण्टे तक वह ताकमें रहा। बकरी हाँफ भी रही थी; पर अमृत-पानके लिए नहीं आती थी। अच्छा, न आवे। वह अपने कर्तव्यसे च्युत हो। प्याससे मरे; पर घड़ियाल भूका क्यों मरे—कदाचित् ऐसा ही कुछ खयाल करके वह पुराना पापी धीरे-धीरे बाहर निकला, और वह भौंड़ा घड़ियाल—जिसकी छोटी-छोटी टाँगों और भारी शरीरसे तीव्र गतिकी कुछ आशा न थी—झपटकर बकरीपर दौड़ा और बकरीको अपने मुँहमें ऐसे पकड़ लिया, जैसे छिपकली दीयेके पास अँखफुट्टेको पकड़ लेती है, और

अँखफुट्टा उसके मुँहमें दाएँ-बाएँ रखा दिखाई पड़ता है। ज्यों ही उसने बकरीको पकड़ा, त्यों ही मैंने ताककर एक गोली उसकी गर्दनमें मारी। गोली खाकर वह भन्ना-सा गया। जमीनपर पट गिर गया। बकरी उसके मुँहसे निकलनेका प्रयत्न कर रही थी। उधर मैं धाँय-धाँय लगातार फ़ायर कर रहा था। छै गोली चलाकर मैंने रायफ़ल फिर भरी और उसकी पीठ पर गोली चलाई। सन्न करती हुई गोली उसकी पीठपर लगी और फिर बकरीको भी उसने भून दिया!

× × ×

मगर मरा पड़ा था। उसकी पूँछ छै-सात इंच पानीमें थी। गोलियोंसे उसकी पीठ छलनी हो गई थी। वह बारह फ़ीट नौ इंच लम्बा था। पेट फाड़कर देखा, तो उसमें चूड़ियाँ तथा कड़े निकले और हालमें खाई हुई स्त्रीके शरीरके भाग। ये चीज़ें जमुनामें फेंक दी गईं। स्मृति-चिह्नमें मैंने कड़े रख लिये! उस दिनसे घाटका प्रयोग होने लगा—लोग बेखटके नहाने-धोने तथा मेरी प्रशंसाके पुल बाँधने लगे।

ख़लीफ़ा के हाथ

मोटरकी बैटरी जब समाप्त हो जाती है, तब बिजली-घरमें उसे 'चार्ज' करते हैं। चाकू जब भोथरा हो जाता है, तब पत्थर पर उसे पैनाते हैं। मेरा जब मस्तिष्क और शरीर थक जाता है और जब चिन्ता और कालरूपी ग्रह समूचा निगल जाने पर उतारू दीख पड़ता है, तब मुझे मानसिक और शारीरिक बैटरी को चार्ज करनेके लिए प्राकृतिक डायनमो-वन और पर्वतों की शरण लेनी पड़ती है। जंगलों और खेतोंमें—मनुष्योंसे दूर—पक्षी और पशुओंकी किलोलों, झूमती हुई डालियों और लहलहाते हुए खेतों और चिड़ियोंकी चहकमें मुझे जो आनन्द प्राप्त होता है, वह कोरे पांडित्यके बोझ से दबी हुई आत्माओंकी वाणी में नहीं मिलता। जंगलों में—आधुनिक सभ्यताके कीटाणुओंसे दूर—हृदय की हिलोर और कल्पनाकी उड़ानेके लिए कोई बन्धन नहीं होता, इसीलिए सालमें दो-एक बार भीतरवाला कहता है।

मोरका घन-गर्जनम, बतखका तरनम और शिकारी का शिकार का पीछा करनेमें। प्राकृति-दर्शनके समय कहीं साथमें रायफल और बन्दूक हों, तो फिर क्या कहना। पांडित्य और योग का जहाँ मिलन हो, उस अवस्थाकी बात ही निराली है।

यदि आपमें प्राकृतिके निरीक्षणकी ओर थोड़ा भी झुकाव हो, तो उसमें आपको ऐसे-ऐसे दृश्य देखनेमें आएँगे, जो मानव संसारमें दीखना मुश्किल हैं। राज नैतिक दाव-पेंच, आत्म-रक्षाकी विकलता, युद्धकी चालें, स्वावलम्बन—कौनसी ऐसी बात है, जो मानव-संसारसे दूर प्राकृतिके इस स्वच्छन्द साम्राज्यमें न होती हो ?

× × ×

मोतीझलाके उपरान्त मैं अपनी कुटियासे चालीस-पचास गजकी दूरीपर तबीयत बहलानेके लिए बैठा था। मेरी दृष्टि जमुनाके वृक्षकी ओर थी कि इतनेमें, दाईं ओरसे, ईखके खेतके कोनेसे, खामोली चिड़ियाकी चटचट-चटरर-चटरर सुनाई पड़ी

दूसरी श्यामोर्ला ने वहीं क्रोध और विरोध-भाव प्रगट किया। पासमें सतभैया फुदक-फुदक अपनी जीविका-प्राप्तिमें लगे थे। ये स्वभावसे ही डरपोक और कोलाहलकारी होते हैं। चटचट चटरर-आतंक सिगनल-सुनकर सबके सब नीमकी डालियोंपर जा बैठे और चटचट-चटररमें उन्होंने भी अपनी कर्णकटु 'कोहै कोहै कैं कैं' ध्वनि मिला दी। गिलहरी भी सँभल गई और पूँछ ऊपर-नीचे करती हुई बोलने लगी--'तिरिप तिरिप तिर्पिरो।' इस सम्मेलनसे आकर्षित होकर चार-पाँच बड़ी गलगलें ऊपर आकर 'क़ैं क़ैं' कर मँडराने लगीं। यह सब कुछ आतंक-सूचक था। पक्षियोंका कोई शत्रु वहाँ अवश्य ही होगा, नहीं तो ये अनेक स्वरमें---एक ही विरोध-पूर्ण और आतंक-सूचक स्वरमें---क्यों बोलते ? हो न हो, साँप या न्यौला होगा; पर मार्चके प्रारम्भमें प्रातःकाल के समय साँप नहीं हो सकता। ईख अभी उगी न थी। कोने पर घास थी उसीमें कुछ था। वही आतंकविन्दु हो रहा था। अपनी गर्दन नीचे करके जो मैंने देखा, तो पिछली टाँगों पर बैठा न्यौला चारों ओर को ताकता दिखाई पड़ा। मेरा अनुमान ठीक था, और पक्षियों का विरोध युक्तियुक्ति है। उस ओर को ज्यों ही बढ़ा, त्यों ही पूँछके बाल फुलाये हुए नकुल महराज तीन-तेरह हो गये। चिड़ियों ने थोड़ी देर तक अपनी दैया-तोबा जारी रखी, बादको वे केवल प्रस्ताव पास करने वालोंकी भाँति अपनी दैनिक क्रिया---दैनिक भोजनकी टोह में लग गईं। पशु-पक्षियोंमें संग्रहकी लालसा नहीं होती। संग्रह करना---जिससे भविष्यमें काम आने---सामूहिक शक्ति और सभ्यता का सूचक है। मानव-समाज में तो पूँजी बड़प्पनका पैमाना-सी हो गई

है; पर वह सुख का पैमाना नहीं हो सकती। पशु-पत्ती जो संग्रह नहीं करते, जो अपनी भूख बुझाकर सायं-समय आनन्द सागरमें लीन हो जाते हैं अगले दिन फिर उसी धुनमें लगते हैं, और आनन्द से विचरते हैं। यह दो-चारमें केन्द्रीभूत अतुल संपत्ति अनेक युद्ध और पापोंकी मूल है।

कोनेमें जाकर देखा, तो एक अधखुदे छेद में न्योले के नख-चिह्न अंकित थे। चिड़ियोंने उसे देख पाया, तो फिर हाय-हाय मचादी। हाय-हायका हो हल्ला चाहे थोड़ी देरके लिए कारगर हो, पर है वह घृणा और हिंसा-सूचक। आत्म-बलका दर्शन उसमें नहीं है। आखिर न्योले को भी मैदान छोड़कर भागना पड़ा। खुदाई बन्द करके देख भालमें वह वैसे ही बैठा था और शायद भागनेवाला ही था। मेरी गतिसे वह हवा हो गया।

मैं लौटकर अपनी जगह जा बैठा। थोड़ी देर बाद क्या देखता हूँ कि न्योला एक मरी हुई चिड़ियाकी गर्दन दबाये खेतकी मेंड़पर खींचता चला आ रहा है।

मैं आश्चर्यसे यह तमाशा देख रहा था। चिड़ियाका डैना कहीं दूब--घासमें उलझ जाता, तो न्योला झटका मारकर उसे खींच लेता था। चिड़ियाको खींचता जाता था और स्वाभाविक शिकारीकी भाँति अपने रक्तवर्ण तथा सतर्क नेत्रोंसे चारों ओर देखता भी जाता था। मैं यह सब देख रहा था। इतने ही में मेरे भाई की कुतिया 'रूबी' वहाँ आई। न्योलेको मरी चिड़िया घसीटते देखकर पहले तो वह चकराई; और फिर पूँछ ऊँची करके और गर्दनके बाल फुलाकर धीरे-धीरे गुर्राई और झपट पड़ी। गाँवके लेंडी कुत्ते पहला हमला तो ऐसा करेंगे, मानो बोटी-बोटी नोच ले जायँगे, पर कहीं एक भी डंडा या लाठी

लग जाय, तो काँय-काँय की धुनिसे और कुत्तोंको को भी दब्बू बना देंगे। तब और कुत्ते इधर-उधर को 'हू' और 'घू' करते हुए चले जाते हैं। कोई-कोई थोड़ी दूरपर खड़े होकर अखलोर करते है, मानो मैदान मार लिया हो, और दो-एक दीवारोंके कोनोंको सूँघकर अपनी राह लेते हैं। रूबी भी इसी तरहकी देहाती कुतिया थी। न्यौलेपर धावा बोल दिया। दो-एक बार पहले वह न्यौलेको भगा चुकी थी। ख़याल करती होगी कि इस न्यौलेकी बिसात ही क्या है? मुँहमें पकड़कर चबाकर फेंक दूँगी। दस- बारह छलाँगोंमें न्यौलेके पास पहुँच गई। कुतिया के इस आक्रमणके पूर्व ही उसकी रोषपूर्ण आकृति देखकर न्यौला अपनी लूटको छोड़ दुम दबाकर भागा था; पर रूबी कर्ण-मार्ग से भागकर दस-बारह छलाँगोंमें उसके पास पहुँच गई।

न्यौला स्वभावसे ही शिकारी और वीर होता है, और अब तो आत्म-रक्षाका प्रश्न आ गया था। भोले पक्षी तक सताए जाने पर मारते हैं। धूलि तक चोटी की ख़बर लेती है। फ़िर न्यौला! और यह सबसे बड़ा और बूढ़ा न्यौला, जिसको मैं 'ख़लीफ़ा' कहता था! बचनेका उपाय न देखकर वह अकस्मात लौट पड़ा और 'फिक्क चख़' करके पहले तो उसने कुतियाको विभीषिका दी; पर कुतिया तो उसे कदाचित् चूहा समझती होगी। कुतियाका मुँह न्यौले की ओर बढ़ा और उधरसे भी चोट हुई। ख़लीफ़ा उछला और कुतियाका सारा क्रोध काफ़ूर हो गया। काँय-काँय और कूँ-कूँ करती हुई मैदान छोड़कर भागी। मेरे सामने होकर निकली, तो उसकी नाकसे ख़ूनकी धार बह रही थी, और न्यौला अभी

तक उसकी नाकमें अपने दाँत गड़ाये और अपने पंजोंके नखोंसे कुतियाकी थूथनीको पकड़े लटका चला जारहा था। भयंकर परिस्थिति थी। कुतिया चिल्लाती फिरती थी और वीर न्यौला उससे चिपटा हुआ था। मैंने कुतियाको पकड़ा। मुझे देखकर न्यौला कुतियाको छोड़कर पूँछ और शरीरके बाल फुलाये हुए भाग गया। मैंने कुतियाको न्यौलेपर हुलकारा; पर अब वह जोरोशोर कहाँ? कातर-दृष्टिसे पूँछ हीला कर रह गई।

× × ×

इस घटनासे दो विशेष बातें हुई; कुतिया को अयोग्यताका सार्टिफिकेट मिला; दूसरी बात यह हूई कि न्यौलेके प्रति हमारी श्रद्धा बढ़ गई। बलिदान, वीरता और त्याग विपक्षियोंके हृदयोंमें भी श्रद्धा उत्पन्न करता है। न्यौला मांसाहारी है; पर वह घी, दूध मिठाई और रोटीको भी बड़े स्वाद से खाता है। मैंने न्यौलोंको अपनी कुटियाके भीतर आकर्षित करनेका ढंग निकाला। कुटिया वाले खेतमें चार-पाँच न्यौले रहते हैं और इधर-उधर घूमा करते हैं। उनके मार्ग में बताशे, रोटी और अन्य खाद्य-सामग्री रखनी प्रारम्भ की। फिर तो न्यौले प्रतिदिन कुटिया में आने लगे। पालतू तो नहीं हुए, पर उनकी झिझक खुल गई। कुटिया की एक ओरसे आकर सबका निरीक्षण कर जाना उनका साधारण काम था, और खलीफ़ा तो बड़ी शान से निरीक्षण करता था। झींगुर और अन्य कीड़ों-मकोड़ो को वह खा जाता था। बर्तनों की तलाशी तो वह खुफ़िया पुलिसवालोंके समान लेता था। कहीं बन्द बर्तनमें कोई घीकी सामग्री न हो—

यह लालच उसके लिए बहुत था । एक बार एक कोनेवाले छेदको सूँघकर उसने खोदना प्रारम्भ किया । थोड़ी देर खोद लेता था और फिर बैठ कर देखता था कि हममें से कोई उसकी ओरको आ तो नहीं रहा है । खोदते-खोदते दस-बारह मिनट हो गये और तब छेदमें से चीं-चीं की आवाज़ हुई । न्यौला एक बड़े चूहेको पकड़ लाया और उसे लेकर भाग गया । इस प्रकार मियाँ खलीफ़ा कुटियामें आते और कुछ-न-कुछ सफ़ाई कर जाते । हम लोग न्यौलेको इन्सपेक्टर-जनरल कहने लगे ।

× × ×

प्रकृतिका ऐसा नियम है कि किसी अवस्था अथवा वस्तुका विपरीत रूपी भी वहीं होता है । समुद्र-मंथन में विष मिला, तो साथ में अमृत-कलश भी आया । जन्म होता है, तो उसका दूसरा रूप मृत्यु भी होती है । विषधर के साथ-साथ उसका नाशकारी न्यौला भी परमात्मा ने दिया है । संख्या-विरोध नियम प्रकृति में अद्भुत है । वह एक ऐसी विचित्र शृंखला है, जो कभी टूटती नहीं : जहाँ साँप होगा, वहाँ न्यौला अवश्य मिलेगा । अपनी कुटियाके निकट कई साँप भी रहते थे । एक-दो साँपोंके पंजर मिले । कदाचित् वे न्यौले द्वारा खाये हुए साँपोंके होंगे ।

एक दिन मैं प्रातःकाल खेतोंमें जा रहा था । अभी कुछ-कुछ अँधेरा था । सामने कोई लकड़ी-सी दिखाई पड़ी । ध्यानसे देखा तो साँप मालूम हुआ और समीप से देखा, तो दुमुही—कुचलैंड—निकली । दुमुही अन्य साँपों के बराबर द्रुतगामी नहीं होती । उसे कोई भी पकड़ सकता है ।

कोई-कोई लोग तो उसका घरमें होना शुभ समझते हैं ; पर साँप की भाँति उसका लपर-लपरकर जीभ निकालना और उसकी तेज़ आँखें भयावनी होती हैं । उसमें एक विचित्र और बात है । वह अपने शरीर की इतनी कड़ी कुजलकें (Coils) बना लेती है कि उनका खोलना या छुड़ाना कठिन हो जाता है। अंग्रेज़ी में जीव-जन्तुओंपर प्रसिद्ध पुस्तक 'वुड्सका प्राकृतिक इतिहास' है । उसमें लिखा है दुमुही प्रायः क्रोध नहीं करतीं और न आक्रमण करती है । वह आवश्यकता से अधिक शान्त है । यह ठीक है, पर वह क्रोध भी करती है । उसे पकड़ कर पानीमें दो-एक बार फेंको और तब पकड़ो, तो मुँह फाड़ कर काटने का प्रयत्न करती है । उसमें विष नहीं होता ; पर किम्बदन्ती तो यह है कि वह बड़ी विषैली होती है । खैर, मैं कुछ आगे जाकर कुएँ पर बैठ गया । जिधर दुमुही पड़ी थी, वही मार्ग ख़लीफ़ा के आने-जानेका था । मैं सोचने लगा कि यदि ख़लीफ़ाका और इसका सामना हो जाय तो क्या हो ? मैं आध घण्टे तक कुएँ पर बैठा रहा । इस बीचमें दुमुही लिपटकर बड़ी कठोर इंडुरी मारकर बैठ गई थी । आध घण्टे के उपरान्त ख़लीफ़ा साहब आये । मार्ग में लिपटी पड़ी कोई वस्तु देखकर वह दूरसे ही चौकन्ना हो गया । सिर ऊँचा करके और नाक हिला कर बगलसे उसे देखा और उस पर टूट पड़ा। ख़लीफ़ा ने दुमुहीपर वारों की झड़ी-सी लगादी । वंशपरम्परागत स्वभाव से वह दुमुही के मुँह को पकड़ना चाहता था, पर दुमुही ने उसको गुँजलक में ऐसा छिपाकर रखा कि ख़लीफ़ा की गुँजलपर एक न चली । तब उसने उसकी पूँछपर अपने पैने दाँत

लाये । उसे लोहू-लुहान कर दिया ; पर उसे काट न
का । उस ओर से विफल हो कर उसने शरीर के अन्य
ागों पर चोटें कीं । नीचे थोड़ा घुम कर कई जगह काट
या । सब कुछ हुआ; पर मुँहपर उसकी पहुँच न हुइ ।
लीफ़ा ने उसे उलटने-पलटने के लिए दाँव-पेच भी किए; पर
ह तो अभेद्य दुर्ग था । पत्थर में से भी कहीं तेल निकलता
? लग-भग आध घंटे के उपरान्त ख़लीफ़ा ने अपना सिर
लाया और दुमुही को उपेक्षा और घृणा की दृष्टि से देखता
आ चला गया । ख़लीफ़ा के हाथ ओछे पड़े । उसके वार
नकम्मे प्रमाणित हुए । विजयश्री दुमुही के हाथ रही ।

आश्विन के महीने में दोपहर के समय नीम के नीचे चार-
ईपर पड़ा 'टुर्गनेव' की पुस्तक पढ़ रहा था । पानी के लिये
ठा और पानी पीकर गिलास रख रहा था, कि मेंडके पार,
सरे खेतमें, ज्वार के कुछ पेड़ हिलते हुए दिखाई पड़े । आँखें
स ओर हुईं । चौकन्ना होकर जो देखा, को कुछ समझ में न
ाया । वायुका वेग इतना प्रबल न था । और वायु का वेग
तना प्रबल भी होता, तो ज्वारके अन्य पौदे भी हिलते; पर नहीं
न-चार पौदे ही झुक-झुककर किसीको प्रणाम-सा कर रहे
। क्या था ? कुछ समझमें न आता था । कौतूहल तो था
, तिसपर शिकारीका कौतूहल और उस समय पढ़ भी रहा
। टुर्गनेवका शिकार-वर्णन । वर्णनको रखकर उठा और
पचाप पाँव साधकर उस ओर गया । मेंठके समीप पहुँचा
ौर झुककर मैंने अपना सिर धीरे-धीरे ऊपरको दूसरी ओर-
। किया, जिससे वहाँका कोई जीव डरकर भाग न जावे ।
सरी ओर दृष्टि पड़ी, तो मैं दंग रह गया । धामिन जातिका

एक मोटा-साँप ज्वारके तीन पेड़ोंसे लिपटा हुआ था। ढाई-तीन गज़ लम्बा होगा। उसके फ़नसे रुधिर बह रहा था। एक आँख उसकी ग़ायब हो चुकी थी। ज्वारके पेड़ोंसे लिपटा हुआ धीरे-धीरे फुसकार रहा था—फी ३ (प्लुत) फी ३। मानो कह रहा था—ज़ालिम, अब तो छोड़ दे—मुक्ति दे। मैं हारा, तू जीता। तोबा है, हज़ार बार, जो अब मैं तेरे मार्गमें आऊँ; पर उसका शत्रु था ख़लीफ़ा, जो विजयी सेनापतिकी भाँति चंगुलमें आये हुए अपने शत्रुको छोड़नेवाला न था। ख़लीफ़ाकी कुछ धज ही निराली थी। क्रोधमें वह आपेसे बाहर था। उसकी शरीर दुगुना प्रतीत होता था। साँपने तो मुझे देख लिया था; पर अपनी वर्तमान परिस्थितिमें वह मुझे अपना त्राता समझता होगा। मैंने जान-बूझकर अपना सिर आगे बढ़ा दिया। ख़लीफ़ एकदम खेतमें भाग गया। साँप जहाँका तहाँ त्रिशंकुकी भाँति टँगा था। ख़लीफ़ाके कारनामे देखनेके लिए मैं छिपकर आगे निकल गया, और पासवाले आमके पेड़पर चढ़ गया। थोड़ी देरमें खलीफ़ा साहब तशरीफ़ ले आये; पर थे रुद्र-रूपमें। दाएँ-बाएँ देखकर शत्रुकी स्थिति देखी।। साँपका फन उसकी पहुँचसे दूर था। ज्वारके पेड़पर वह चढ़ नहीं सकता था। साँपका एकमात्र, आश्रय था अपने फनको न्यौलेसे दूर रखना सो ज़मीनसे वह दो गज़ ऊँचा और पेड़से अलग था। साँप तो पेड़ोंसे लिपटा हुआ था; पर उसने अपना फ़न पेड़से दूर रखा था। चोटसे बचनेका उपाय ही यही है कि चोटकी मार-से दूर रहा जाय और बचावके सभी साधनोंको प्रयोगमें लाया जाय। दुखी साँपने इसीलए अपना फन दूर रखा था; पर ख़लीफ़ा पुराना खिलाड़ी था। उसने ऐसे अनेक रण जीते

ोगे। वह कोई नौसिखिया नहीं था। फन तक पहुँचनेका कोई ाधन न पाकर, वह उछलकर उसकी पूँछपर चढ़ गया, और ागेको बढ़ा; पर साँपने एकदम अपनी पूँछ पलटकर उसको ुजलकमें फाँसना चाहा। ख़लीफ़ा इस चालको ताड़ गया, ौर वहींसे नीचे कूद पड़ा।। इस प्रकार उसने बीस-पचीस ार ऊपर चढ़नेका प्रयत्न किया; पर प्रत्येक बार उसे विफल ोना पड़ा। अन्तमें एक बार वह तीव्र गतिसे ऊपर चढ़ा, और ाँपके फनको जाकर पकड़ लिया और चबचबा डाला। न्यौले और साँपके बोझसे पौदे झुक गये, और ख़लीफ़ा के पैर ज़मीन पर टिक गये। साँप इता बड़ा था कि यदि किसी प्रकार वह न्यौलेको गुँजलकमें पकड़ पाता, तो उसका भुरता कर देता; पर 'यदि' की जो कठिनाई थी। न्यौला साँपके फनपर ही आक्रमण करता है। साँप उसको काटने और फाँसनेका हज़ार प्रयत्न करता है; पर न्यौलेके पैंतरोंके आगे साँपकी एक नहीं चलती। फिर ख़लीफ़ा ऐसे युद्धोंमें निपुण था। फनको मुँहमें पकड़ लिया। अब उसके सामने प्रश्न था लिपटे साँपको पेड़ोंसे खींचना। रुक-रुककर, अपनी संचित शक्तिको लगाकर वह साँपको खींचता था। ढंगोंसे प्रतीत होता था कि नाग-पाशको खोलना कोई सरल काम नहीं; पर न्यौला डटा था। न मालूम कितने बार उसने साँपको खींचा। उधर साँपका सम्पूर्ण फन ख़लीफ़ा के मुँहमें था। रुधिरसे पेड़ और न्यौला रंजित थे। इतनी देर के तुमुल युद्धने साँपकी शक्तिको क्षीण कर दिया; वे कड़े बंधन, जिनसे साँप पेड़ोंपर लिपटा हुआ था, ढीले पड़ गये, और साँपकी लोथ नीचे गिर गई। ख़लीफ़ाने तनिक विश्राम लिया और इधर-उधर देखकर फिर खींचनेमें लगा, और खींचकर

उसको घासमें आमके पेड़के नीचे ले आया और खाने लगा। एक तिहाई भागसे वह सन्तुष्ट-सा हो गया; शेषको वह खेतमें घसीट ले गया।

× × ×

तीन-चार दिन उपरान्त साँपका पंजर आमके वृक्षके नीचे मिला। खलीफाके मैंने अनेक हाथ देखे थे; पर खलीफा-सर्पके इस तुमुल युद्धसे मेरी यह धारणा हो गई है कि न्यौला बाँका लड़का है, और यदि कहीं वह बिल्लीके बराबर होता, तो शेर और बाघको भी लड़ाईमें हरा देता।

पैने छुरे

जीवन से हाथ धोनेको तैयार रहना साहसकी कसौटी है, और साहस जीवन-गृहका एक स्तम्भ है। जिस शिकारमें जीवन जानेकी अशंका नहीं, वह ऐसा है, मानो ब्रह्म रहित उपनषिद्-पाठ अथवा गृहणीके बिना गृहस्थ। मैं ऐसा ही महसूस करता हूँ। अन्य शिकारियोंकी यह राय नहीं है। अनेकोंको तो तीतर, बटेर और क्रौंचके शिकार में भी आनन्द आता है। मेरे ख़याल से—जो ग़लत हो सकता है—शिकार और जोखिममें पुरुष और प्रकृतिका-सा सम्बन्ध है। शिव प्रकृति बिना—इकार बिना—कोरे शव रह जाते हैं, और शिकार जोखिमके बिना--कम-से-कम मेरे लिए--विकार है। हाँ, परिश्रम और उत्तेजनाकी मात्रा जोखिमहीन शिकारमें कुछ आकर्षण उत्पन्न करती है—और ऐसे शिकारमें स्वार्थकी भावना उत्तेजनाको और भी आकर्षक बना देती है। हिरन मारे जाते हैं अपने मीठे मांस की ख़ातिर नहीं, वरन उस चर्मके लिए, जिससे परमात्माने उनकी देहको ढका है और जिसपर बैठकर

लोग धारणा, ध्यान और समाधि की ओर प्रवृत्त होते हैं। सींग और खालका लालच, घूमघाम और प्रकृति-दर्शनने न मालूम कितनी बार मुझसे उनका अन्त कराया है। सीताजी के आग्रहसे राम 'परम रुचिर मृग' के पीछे दौड़े थे, और यह महापातकी 'राम' नामधारी भी मगरकी खालके लालचसे—वह भी अपने लिए नहीं, मित्रोंके लिए—और भ्रमण-प्रवृत्तिके कारण गंगा, काली और यमुनाकी ओर दौड़ा करता है। कभी-कभी मनमें द्वन्द्व होता है कि किसी और प्रकार मन बहला ले। चिन्ता और विपत्तियाँ साथ छोड़नेवाली नहीं। वे चिरसहचरी हैं। तू रोता हुआ पैदा हुआ और शायद रोता हुआ ही महा-यात्रा करेगा। तू ही उनका साथ छोड़। शिकार के क्षणिक नशे में उन्हें भूलेगा, तो फिर खुमारमें उनकी वेदना अतिविषम होगी; पर वर्षमें एकबार—अधिक नहीं—उधर जाता हूँ। अपने बश की बात नहीं है। क्या करूँ ?—

'फिरता हूँ फेरता है वह परदानशीं जिधर
पुतलीकी तरह मैं नहीं कुछ अख्तियार में।'

\+ + +

पूस मासके अन्तिम दिनोंकी बात है। मगरके शिकार के लिए यमुना के किनारे गया हुआ था। नदी-तटसे ठहरनेका स्थान एक मील बीहड़में था। ठहरनेके स्थानसे सात-आठ मीलकी दूरीपर एक दिन घंटोंकी तपस्या और कठिनाईसे दो मगर मारे। खाल निकलवानेमें देर हो गई, इसलिए, मार्ग छोड़कर ऊबड़-खाबड़ नालों (Ravines) में होकर हम लोग पहाड़की ओर चले। दो-तीन मील गये होंगे कि रक्तवर्ण कम्पित

सूर्यने क्षितिज की चादरमें अपना मुँह ढँक लिया, और श्यामा रातकी परिचारिका गोधूलिने प्रकृतिको अपनी स्वामिनीके आगमनका संवाद दिया। चारों ओर से मानो साम्राज्ञी रातकी दुन्दुभी बजने लगी। दिनचर इधर-उधर दौड़ रहे थे। प्रकाश की सत्ता पलट गई थी। हम लोग लपके चले जाते थे। अभी साम्राज्ञी रातका श्याम अंचल दृष्टिगोचर नहीं हुआ था। सूर्य डूब चुका था, पर दिग्दर्शनके लिए उजाला काफी था। नीलगाय के झुंड चरनेके लिए डाँडोंपर आ रहे थे। खरगोश हमारी आहटसे बिदककर और भागकर कुछ दूर खड़े हो जाते थे। तीतर झाड़ियोंमें जा चुके थे। ठंड बढ़ रही थी। रायफलमें चार कारतूस भरे मैं सैनिक-वेषमें खटाखट चला जा रहा था। शिकारका कोई खयाल न था, जो बिना आहट किये लुक-छिप-कर चलता। मैं तो चाहता था कि पर लग जाते, तो उड़ जाता और पड़ावपर जाकर मगर की खालोंमें नमक लगवाकर, राय-फल को साफकर, दस-बारह रोटियाँ पेटमें डालता; पर कल्पना के परोंसे शरीरमें पर थोड़े ही लग सकते थे। भूख और थका-वटमें गपशप भी अच्छी नहीं लगती थी और न बात करनेकी तबीयत ही होती थी। चमार खाल लादे पीछे-पीछे आ रहा था। पीछे मुड़कर उसको देखने से ही वह मेरा अभिप्राय समझ जाता था; पर मेरी चालको एक तो वह वैसे ही नहीं पा सकता था और तिसपर वह लदा भी था। थोड़ी दूर आगे गये कि एक लम्बा-चौड़ा डाँडा मिला। उसकी वगल की ओर को नीचे मैदान था। उसके एक कोनेमें कुछ खेत थे। चमारने कहा—"पंडितजी, ईखकौ खेतु ऐ। खाउ तो बालँग है कैं निकच्चलौ। एकादु तोल्लीऔ।"

मैं—"ठीक कहा। दो-एक खेतका ही तो चक्कर पड़ेगा। भूखसे दम भी निकला जाता है। चलो, पूरबको ओरसे चलना ठीक होगा।"

यह कहकर हम लोग नीचे को उतरे। जौके पौदे ओसकी मणिमाला पहने रातके शुभागमनके लिए खड़े थे। सरसोंके पौदे झुके हुए कोरनिश-सी बजा रहे थे। खेतकी मेंडसे पार किया, तो बीचमें एक नाला दिखाई पड़ा। उस नाले से दो-तीन फर्लांग पार करके पूर्वसे पश्चिमको डाँडेके आगे ईखका खेत था। नाला पश्चिम से पूर्वको टेढ़ा-मेढ़ा बहा था, मानो वह मैदान की करधनी हो। नाले के पास पहुँचा ही था कि चमार—बोला—'अरे पंडितजी, बु देखौ, कितनौ जैयदु (बड़ा) सूअर जाई ओरकूँ आइ रहौ गे!'

हक्का-बक्का होकर मैंने देखा, तो मुझसे सौ गज आगे एक बहुत बड़ा सूअर मस्त दुलकी चालसे–कर्णमार्गसे—पश्चिम की ओरसे पूर्वको जा रहा था। ओ हो, कितना बड़ा था और उसमें कितनी चर्बी थी! उसकी बड़ी-बड़ी काँपें Tusks) साफ बाहर दिखाई देती थीं, मानो बादल में आधे दबे हुए दो द्वितीया के चाँद मुँह में दबाये जा रहा हो। उसने हमारी उपेक्षा की। सायंकालके समय अपने भोजनके लिए निकला था। फिर दो-चार आदमियोंकी वह क्या परवा करता! उसकी काँपें कम्प उत्पन्न करती थीं। बड़े सुअर पर शेर भी सामने से वार नहीं करता। उसकी टक्कर को शेर सह नहीं सकता, पर शेर और बाघ इतने फुर्तीले और चालाक होते हैं कि अपने ऊपर सूअर की चोट होने नहीं देते। जंगल में जब कभी सूअर और शेर-बाघका सामना हो जाता है, तो सूअर झाड़ी या

चट्टानकी ओर पिछाई करके खड़ा हो जाता है और क्षत्रियोंकी भाँति छाती खोलकर डट जाता है। शेर या बाघ ऐसी अवस्था में सूअर पर वार नहीं करते, और उसको बहकाकर या भगा-कर, पीछेसे उसपर टूट पड़ते हैं।

इतने बड़े सूअरको देखकर मेरा उत्साह जागृत हो उठा; मानो बुझते हुए कोयलों में किसी ने फूँक मारी हो। भूख तो जाने कहाँ चली गई। रायफलको कन्धेसे झट उतार बोल्टसे नालमें कारतूस पहुँचाया। खड़ाखड़की ध्वनि से सूअर ने मेरी ओर मुड़कर देखा, मानो अपनी काँपोंकी शक्तिकी चेतावनी दी हो। वह तनिक रुका और कुछ तेज होकर नाले में चला गया। मैंने उसकी अगाई काटनेके लिए दो आदमियोंको उधर भेजा। नाला टेढ़ा-मेढ़ा था, इसलिए, आदमी भाग कर सीधे सूअरके मार्गके आगे पहुँचे। मैं नालेके ऊपर इस ख्यालसे खड़ा था कि सूअर लौटकर नाला-ही-नाला मेरी ओर आयगा। नालेकी गहराई केवल डेढ़ गज होगी, इसलिए; सूअरको ऊपर चढ़ना कोई कठिन न था। मैंने तो मोर्चा जमा दिया था। पचास गजके निशानेकी दूरी लगाकर रायफ़ल साधे बैठा था और द्वितीयाके चन्द्राकार काँपवाले वाराहके आगमन की प्रतीक्षामें था ; भीतर-ही-भीतर यह भी आशंका थी कि कहीं गोली ठीक न लगी, तो चीर कर टुकड़े-टुकड़े कर देगा, पर बाजी लगा चुका था। इतना बड़ा सूअर ढूँढ़नेसे भी नहीं मिलता। न मालूम निरामिष भोजी उस सूअरने कहाँके कंद-मूल खाये थे। वह शायद इक्कड़ था। हाथी जैसे मस्त होकर इक्कड़ हो जाता है, और जिसे पा लेता है, उसे समाप्त करके ही छोड़ता है, उसी प्रकार सूअर भी इक्कड़ होता है

और अन्य सूअर उससे घबराते हैं। बुड्ढा होकर भी वह एकान्तवासी हो जाता है। अब तो मेरी उससे ठन गई थी। थोड़ी ही देर में क्या देखता हूँ कि एक भारी काली-सी शिला खेतमें होकर भागी जा रही है। वह सूअर था। नाले-नाले न आकर वह अपने उसी रास्तेसे लौट पड़ा, जिससे आया था। आगे आदमियोंका खटका समझ वह लौटा था। उसे खेतमें जाते देख, टोप एक ओरको फेंक, मैं खड़ाहो गया। सूअर एक-दम ऐसे रुका; मानो मोटरमें कोई एकदम ब्रेक लगा दे। मेरी ओर कान किये हुए वह खड़ा हो गया। आँखें स्पष्ट दिखाई नहीं पड़ती थीं; पर वे द्वितीयाके चाँद-रूपी उसके अस्त्र स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे। उसकी आकृतिसे प्रतीत होता था, मानों कह रहा हो—'ऐ मूर्ख अपना रास्ता देख। छेड़खानी करेगा, तो करे का फल पायगा।' पर मैं तो अपनी रैमिंटगन राय-फ़लके बूतेपर उससे उलझने को तैयार था। कहीं २२० ग्रेनकी गोली काँखमें जम जाय, तो भीत-सी गिर पड़े—यह ख़याल करते हुए और 'पीप साइट' में से सँभालकर (क्योंकि अँधेरा था और अँधेरेमें 'पीप साइट' ठीक काम नहीं करती), निशाना लेकर गोली दाग दी। घुर्र और कीं करके सूअर भागा। बड़े आश्चर्य की बात हुई, जो वह सीधा मेरी खबर लेने नहीं आया केवल तीस-चालिस गजकी ही दूरी पर तो था। उधर नजर जो डाली, तो सूअरकी एक अगली टाँग ही नदारद थी! गोली तनिक नीचे पड़ी। दो-तीन इंच ऊँची पड़ती, तो बाबाकी भीत बैठ जाती।

सूअर बीहड़की ओर भागा, और हम लोगोंने उसका पीछा किया। अनुमानसे एक घनी झाड़ीके पास आये, तो कराहनेका

शब्द सुनाई पड़ा। शब्दसे प्रतीत होता था कि मौतके कीटाणु उसके शरीरमें प्रवेश कर चुके हैं। हमने छेड़खानी करना उचित न समझा और अगले दिन वहाँ आनेका निश्चय किया। जान-बूझकर आगमें कूदना मूर्खता है; पर शिकार-उत्तेजनामें लोग मूर्ख बन ही जाते हैं। उस दिन मैंने सीमाका उल्लंघन नहीं किया। उत्साह और आश्चर्य की तरंगोंमें मेरा मन बह रहा था। प्रसन्नता और आनन्द—विशेषकर शिकारके आनन्द—का मार्ग वाह्य होता है। वह गलित कोढ़के समान फूट-फूटकर प्रकट होता है। अपने भाग्यको सराहता हुआ कि इतना बढ़िया सूअर अनायास ही मिल गया, मैं चला जाता था। प्रातःकालके लिए लम्बे-चौड़े मंसूबे बाँधने लगा कि सूअर मरा मिलेगा। अफ़सोस ! केमरा नहीं जो उसका फ़ोटो लिया जाता; पर अन्तरिक्षमें विधाता हँस रहा था !

× × ×

सूर्योदय होते-होते हम लोग वहाँ पहुँच गये। साथमें गाँवके दो कुत्ते भी लेते गए, ताकि आवश्यकता पड़नेपर वे सूअरको झाड़ीसे निकाल सकें या भागनेपर उसे रोक सकें; पर यह सब कुछ तो सावधानीके लिये था। आशा तो यह थी कि सूअर मरा मिलेगा। कई आदमी साथ थे और गाँवके कुत्ते भी, इस-लिए, चुपचाप वहाँ न पहुंच सके। वहाँ जाकर देखा; तो झाड़ीमें निस्तब्धता थी। जिधरसे सूअर उसमें घुसा था; उधर ख़ून की धार थी। ख़ून ताज़ा न था। ख़याल किया कि सूअर मरा पड़ा होगा। मैंने ऊपरसे एक ढेला फेंका, तो झाड़ीमें कोई खड़खड़ाहट न हुई, पर जैसे ही दूसरा ढेला मारा कि घुर्र

करता हुआ, सूअर निकल भागा। उसके निकलते ही गाँव-वालोंने हो-हा मचाई। कुत्तोंका प्रोत्साहन हुआ और तीन टाँग वाले घायल सूअरको उन्होंने बातकी बातमें जा पकड़ा। एकने तो पीछेसे हमला किया, दूसरे ने उसकी अगाड़ी रोकनी चाही। रायफ़ल या बन्दूक चलाने का अवसर लोगोंने न दिया। लाठी और बल्लम लेकर उस ओर को पिल पड़े। वे कुत्ते बड़े लागू कहे जाते थे। उन्होंने अनेक सूअरोंको पछाड़ा था, पर इतने बड़े सूअरका उन्हें अनुभव न था। अनुभव ही होता तो क्या! पशुवृत्तिमें समझ और अनुभवका काम थोड़े ही होता है। आगेवाले कुत्तेने ज्योंही सूअरकी अगाड़ीसे जाकर उसकी बग़लमें मुँह मारना चाहा कि सूअरने मुड़कर कुत्तेको मुँहमें दबा लिया और सेकेंडोंमें कच-कच-कच करके कुत्तेको मार दिया। उस कुत्तेका चीत्कार सुनकर दूसरा कुत्ता हतोत्साह हो गया और दूर जाकर भोंकने लगा। फिर आदमियोंसे भी आगे नहीं बढ़ा गया। प्रोत्साहनमें एक बिजली होती है, जो लँगड़े-लूलेको भी कर्मण्य बना देती है। हार और पतनमें अकर्मण्यता का वास है। पीछेवाले कुत्तेने अपने साथीका पतन देखा और ह्रास और अकर्मण्यताने प्रोत्साहनकी बिजलीके 'स्विच' को बन्द कर दिया। कुत्तेके चीत्कार और उसके पतनसे ह्रास और भयके परिमाणु उसके कान और आँखोंके मार्गसे प्रवेश कर गये। शक्ति क्षीण होगई। सोच-विचारसे वह पीछे नहीं हटा था। सोच-विचारका काम तो आदमीका है, और मानव-समाजमें भी विपत्तिमें विरले ही साथ देते हैं। विपत्ति वह भयङ्कर शीत है कि जिसमें सहानुभूति-रूपी उष्णता ठिठुर जाती है--मृतकके समान हो जाती है। सूअरकी विकराल काँपें और उसकी अपूर्व

शक्ति देखकर हमलोग भी सहम गये। कुत्तेके प्रति उनकी पूर्व संचित सहानुभूति भी ठिठुर गई। उधर सूअरके रौद्ररूपने उन्हें सहमा दिया। कुत्तेको कराहता छोड़ सूअर आगे भागा। लोग उसके पीछे दौड़ने लगे। मैं कुत्तेके पास आया। उसकी आँखों में अब भी ज्योति थी। अन्तिम प्राण-वेदना हो रही थी। उसका भीतरवाला बलपूर्वक निकाला जा रहा था। जिस घरमें उसका वास था, उसका अन्त सूअरने अपने छुरोंसे कर दिया था। वह मर चुका था; पर उसमें जीवन प्रतीत होता था। जीवनकी गन्ध तो थी ही। फूल सूख जाता है; पर गन्ध शेष रह जाती है। रस्सी जल जाती है पर उसका टेढ़ापन क़ायम रहता है। कुत्तेके शरीरका निवासी यात्रा कर चुका था; पर उसके पदचिह्न शेष थे। कुत्ता शरीरका स्वामी न था; पर उसका वस्त्र पड़ा रह गया। मैंने उसके मुँहमें ब्रांडी डाली; पर अग्नि होती, तो अहुतिका धुआँ निकलता। उसको छोड़ मैं भी सूअरके पीछे लगा। दौड़कर मैंने लोगोंको पकड़ा और कहा कि वे मुझसे एक फ़र्लांग पीछे चलें, ताकि मैं सूअरको मार सकूँ। भभ्भड़में सूअर भी हाथ न आयगा और किसी आदमीकी जान चली जायगी। लोग पीछे रुक तो गये; पर अनिच्छासे। ठीक वैसे, जैसे अध्यापकके रोबके कारण लड़के तमाशा देखने जानेसे रुक जाते हों। पीछे जब हो-हल्ला कम हुआ, तो मैं भी धीमा पड़ गया और सुअरकी खोजपर चलने लगा। खोज लगानेके लिए मैंने भीड़मेंसे एक खोजीको भी साथ ले लिया।

शिकारका सबसे बड़ा आनन्द और शिकारकी एक मुख्य कला है खोज लगाना। खोज लगाना साधारण बात नहीं है।

बड़े अनुभवका काम है। जहाँ एक-से ही ताजा खोज हों और खून भी न हो, वहाँपर खोजका लगाना बड़ा कठिन है। सूअर, पता नहीं, किस ओर गया था; पर हम लोग झुके हुए, उसकी खोज ढूँढ़ते हुए, और उन्हींपर, चले जाते थे। पथरीली और चटकीली धरतीपर खोज लेनेमें बड़ी कठिनाई पड़ती थी। जब खोज न मिलती, तो पन्द्रह-बीस गजकी परिधिमें घूमकर उसके खुरोंके चिह्न देखते। फिर खोज मिल जानेपर ऐसी प्रसन्नता होती मानो निधि मिल गई हो। कभी-कभी नालेमें, जहाँ चौरस्ता होता, बड़ी कठिनाई पड़ती; पर लगा खोजी बुरा होता है। हम लोग कभी-कभी ग़लत खोजपर चले जाते; पर दस-बीस गज जाकर लौट पड़ते और फिर असली खोज ढूँढ़ निकालते। ठीक डेढ़ घंटे बाद हम लोग बीहड़के एक सुनसान स्थानमें आये। खोजके चिह्न एक पीलूकी घनी झाड़ीकी ओर गये थे। 'हो न हो, सूअरने यहीं विश्राम लिया है'—यह कहकर मैंने अपने साथी खोजी को आगे बढ़नेसे रोका। वह झाड़ी एक घने नालेकी बग़ल में थी। यह निश्चय करने के लिए कि सुअर वहीं हैं, हमने उस नालेके आस-पास उसकी खोज ली। यदि वह उस घनी झाड़ीमें न होगा, तो झाड़ीके आस-पस उसका खोज ज़रूर मिलना चाहिए। हमारा अन्दाज़ ठीक निकला। पास कहीं खोजके और चिह्न नहीं थे। हम लोग झाड़ीके अति निकट नहीं गये। सूअर बिदका हुआ था। कहीं टूट पड़े, तो कुत्तेकी मौत मरनेकी आशंका थी—यह सोचकर मैं नालेके ऊपर चला गया और रायफ़ल सम्हाली, और अपने साथी से पीछे वाली भीड़ में से छै-सात आदमियों को—बल्लम वालोंको—बुलानेको कहा। उनको चुपचाप आने का आदेश दिया था।

क्रोधित सूअरने जब देखा होगा कि उसका पीछा करने वाले नहीं हैं, तो वह नालों और डाँडोंको पार करता हुआ वहाँ आया। खून की खोज न थी; पर उसके खुरोंकी खोजके सहारे हम लोगोंने उसे जा घेरा। आदमी भी आगये और वे ही आये थे, जो उसके मांस के लिए लालायित हो रहे थे। उन्हें सूअर मारनेका कुछ अनुभव भी था; तिसपर मेरी रायफलके सहारेको वे ब्रह्मास्त्र समझते थे। आते ही एक ने कहा--'का करैं सा' ब, कसूर बानि परो। मैंएं (वहीं) बन्दूक हम चलाइ लैं लेते, तौ न तौ बु कुत्ता मत्तो औ न हैरानगती होती।'

'अच्छा, हो गया सो हो गया, अब जैसा मैं कहूँ, वैसे ही तैयार खड़े रहो।'--मैंने कहा।

नालेके ऊपर ढाँग थी, इसलिए, उधरसे तो हिमालय की सी रोक थी। उधर सूअर चढ़ नहीं सकता था। उसके निकलने का एक ही मार्ग था, और उसे हमने घेर लिया था। एक आदमीको मैंने ऊपर ढाँगपरसे झाड़ीमें ढेला फेंकते और कोलाहल करके सूअरको निकालनेके लिए भेज दिया। तीन आदमी नालेकी एक बगलमें बल्लम लेकर खड़े हो गये और तीन एक ओर। सबसे आगे मैं रायफल लेकर खड़ा हो गया। सूअर वहाँसे एक ही मार्गसे नालेमें होकर निकल सकता था। यदि गोली न भी लगी, तो छै बल्लम वालों में से एक-दो के बल्लम तो उसके अवश्य छिदेंगे, और इतनी देरमें फिर सूअर क़ाबूमें कर लिया जायगा। कन्दराके मुँह पर कोई व्यूह रच ले, तो कन्दरा में से कोई कैसे निकल सकता है? हलाहल पीकर कोई कैसे बच सकता है? पर मनुष्य की बुद्धि से परे भी कोई चीज है। कभी-कभी अनहोनी होनी हो जाती

है। घनघोर बादल घिर आता है, और यह प्रतीत होता है कि पृथ्वी जलमग्न हो जायगी। घोर वृष्टि की सब प्रतीक्षा करते हैं; पर कभी-कभी ऐसी दशा में एक बूँद भी नहीं पड़ती। सुखकी आशा में—भविष्यकी कोमल कल्पनाओंमें—कभी-कभी घोर संकट आ पड़ता है। हम कोग भी यह निश्चय कर बैठे थे कि सूअर निकलते ही बल्लमोंमें विंध जायगा। पहले तो वह रायफलकी गोलीका ही निशाना बनेगा। हमारे शरीरकी एक एक नस उत्तेजित थी। मैं तो ऐसा सचेत था कि रोम-रोम आँख बन रहा था—यदि सूअर मेरे पीछे से आता, तब भी मैं उसे देख लेता।

ढाँगके ऊपरसे ढेले और पत्थर पड़े। झाड़ी में कुछ आहट हुई। हमारे स्नायु और भी खिंच गये। सूअर निकला। फायर हुआ और कुम्भकर्ण—सूअरकी पीठमें फिसलनी हुई गोली लगी। पिछली टाँगोंके बल वह तनिक ठुटनाया और चिंघाड़ा, फिर शीघ्र ही भागने की चेष्टामें मेरे पास होकर झपटा। दूसरी गोली चलानेका अवसर ही न दिया कि मेरे पास आकर उसने अपनी थूथड़ी ऊपरको की। बाईं रानपर उसकी कापें पड़ीं, सो भी ओछी। पीड़ासे मेरी चीख निकल गई।

दो मिनटकी मूर्छाके उपरान्त देखा, तो मुझसे चार-पाँच गज आगे बल्लमोंसे बिंधा सूअर पड़ा था। उसकी तीक्ष्ण काँपें—पैने छुरे—मेरी ओर को थीं। खूनसे मैं लतपत हो गया था। सूअरने मुझे ऐसे पलट दिया, मानो कच्चे घड़ेको कोई उठाकर फेंक दे। पीड़ा से मूर्छा आ गई थी। सूअर कहीं रुककर पूरा वार कर देता, तो मेरी भी गति उसी कुत्ते

की भाँति होती। नाममात्रको तनिक झपेट ही हुई थी कि मैं मृतप्राय हो गया। मुझपर उसने चोट की और मैं सूअरके पीछेकी ओर गिरा। सूअरका वार नीचे से ऊपरको—भागतेमें पीछेकी ओरको—था, इसलिए, मैं पीछेकी ओर गिरा। जो कहीं आगे को गिरता, तो जाने क्या होता! मुझपर चोट होते ही वल्लमोंके तीक्ष्ण फल सूअरकी देहमें प्रवेशकर गये। वह गोलीसे ही लगभग भुन चुका था। भालोंने खात्मा ही कर दिया!

करवटके बल आधा लेटा हुआ मैं कराह रहा था और जाँघसे निकलने वाले खूनके परनालेको रोकनेके लिए कपड़ा बँधवा रहा था। सूअरकी काँपें हड्डी तक न पहुँची थीं, इसीलिये खून रुक जानेपर कोई डरकी बात न थी। उस पीड़ा और कष्टमें उस समय ख़याल आ रहा था कि अन्तरिक्षमें विधाता मेरी इस गतिके लिये हँस रहा है!

× × ×

सूअरकी लाश पड़ाव की ओर लादकर लाई गई, और मैं भी खटियापर लाया गया। लोट-पोटकर मैं अच्छा हो गया: पर उन पैने छुरोंका चिह्न अब भी चन्द्रकारमें बाईं जाँघपर है और तब तक रहेगा, जब तक काया इस रूपमें है।

अब तक कभी मैं किसी बड़े सूअरको देखता हूँ, तब मुझे दागी करनेवाले सुअरका स्मरण हो आता है, और उसकी प्रशंसामें बाराह-अवतारका यह श्लोक कह बैठता हूँ—

"वसति दशनशिखरे धरणी तव लग्ना।
शशिनि कलंककलेव निमग्ना॥
केशव धृतशूकररूप। जय जगदीश हरे!"